www.thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 12 फरवरी 2017 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार, 12 फरवरी 2017 से 18 फरवरी 2017

फाल्गुन कृ. – 02 ● वि० सं०–2073 ● वर्ष 58, अंक 62, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 192 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,117 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. जालंधर ने नए प्राचार्य के पदभार संभालने पर किया यज्ञ, पुष्प वृष्टि के साथ हुआ स्वागत

डी.ए.वी. कॉलेज जालंधर ने अपने नए एवं 17वें प्रिन्सिपल डाक्टर एस के अरोड़ा द्वारा पदभार संभालने पर यज्ञ किया। प्रिंसिपल डा संजीव कुमार अरोड़ा ने यज्ञ में भाग लेकर विधिवत् पदभार संभाला और नए सत्र के लिए प्रार्थना भी की।

डी ए वी कालेज में पहली बार स्टूडेंट्स से मुखातिब होते और उन्हें शुभकामनायें देते हुए प्रिंसिपल अरोड़ा ने कहा–''जीवन में सामान्य नहीं बल्कि श्रेष्ठ और स्पष्ट बनें। अगर आप श्रेष्ठ हैं और अपनी मंज़िल के प्रति आप स्पष्टता रखते हैं तो एक दिन अपनी मंज़िल तक ज़रूर पहुँचेंगे। हर काम मन लगा कर करें। तनावग्रस्त नहीं रचनात्मक बनें'' डॉ. संजीव अरोड़ा ने छात्रों और स्टाफ से आग्रह किया कि "जीवन में उत्साह कायम रखने के लिए उत्तम उपाय करते रहें अपने आस पास के कामयाब लोगों का संग करें, अच्छी पुस्तके पढ़ें, उत्तम विचारों को पढ़ें और उनका संग्रह करें। प्रेरणा दायक विचारों को लिखकर अपने सामने रखें उनको रोज पढ़ें, उत्साहवर्धन होगा।"

प्रिन्सिपल अरोड़ा ने विद्यार्थियों को कॉलेज के नियमों की जानकारी देने के साथ कठिन मेहनत करने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने कहा, आर्य समाज का चिन्तन, दर्शन, मूल्य तथा आदर्श हमें जीवन से जोड़ते हैं और पूर्णता की ओर ले चलते हैं। आर्य समाज द्वारा संचालित संस्थाओं का शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

प्रिन्सिपल अरोड़ा ने यज्ञ की महत्ता बताते हुए छात्रों और अध्यापकों को यज्ञमय जीवन जीने को प्रेरित किया। "वे बोले यज्ञ मेरी सफलता का मार्ग है, यज्ञ मेरी मुक्ति का मार्ग है, ईश्वर से मिलाने का मार्ग है।"

प्रिन्सिपल अरोड़ा ने कहा 100 साल पुराने डी ए वी कॉलेज जालंधर को अपनी सेवायें प्रदान करने का मौका मिलना अपने आप में ईश्वर का दिया हुआ एक अनमोल उपहार है। मैं भरपूर कोशिश करूँगा।

कॉलेज का रुतबा इसी तरह बरकरार रहे। श्री अरोड़ा ने कहा "मैं तहे दिल से शुक्र गुज़ार हूँ डी ए वी प्रबंधक कमेटी का खास तौर पर प्रेजिडेंट डॉ. पूनम सूरी जी का उन्होंने मुझे इतने उत्कृष्ट एवं प्रतिष्ठित संस्थान का नेतृत्व प्रदान दिया। मैं भरपूर कोशिश करूँगा। प्रबन्धक समिति की उम्मीदों पर खरा उतरूँ।

बी.बी.के डी.ए.वी. कॉलेज द्वारा आर्यसमाज लोहगढ़ में यज्ञ का आयोजन

बी.के डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर की 'आर्ययुवती सभा' द्वारा ऐतिहासिक आर्यसमाज लोहगढ़ अमृतसर में यज्ञ का आयोजन किया गया जिसमें श्री जे.पी. शूर, प्रधान, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा, पंजाब व निदेशक, पी. एस–1 मुख्यातिथि, डॉ. नीलम कामरा, मंत्री, आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि, उपसभा, पंजाब व क्षेत्रीय निदेशक स्कूल एवं डॉ. हरमहेन्द्र सिंह बेदी, पूर्व प्रो. एवं अध्यक्ष, गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर विशेष अतिथि के रूप में पधारे।

कॉलेज प्राचार्या आए हुए अतिथियों का स्वागत किया। उन्होंने कहा कि आर्य समाज डी.ए.वी. की माँ है। कोई धर्म या सम्प्रदाय न होकर एक विचारधारा है जो निरन्तर भारतीय समाज का उद्धार कर रही है। डी.ए.वी. प्रबंधकर्त्री समिति एवं आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली के प्रधान डॉ. पूनम सूरी जी के प्रति धन्यवाद ज्ञापित करते हुए प्राचार्या जी ने कहा कि उनकी अनवरत् प्रेरणा से ही ऐसे आध्यात्मिक कार्य सम्पन्न होते हैं।

श्री जे.पी शूर ने अपने वक्तव्य में डॉ. पुष्पिंदर वालिया को इस भव्य आयोजन की हार्दिक बधाई दी और महर्षि दयानन्द सरस्वती जी द्वारा वैदिक–संस्कृति के प्रचार–प्रसार एवं सामाजिक कुरीतियों के नाश में दिए गए योगदान एवं बलिदानों के बारे में बताया और कहा कि आर्य समाज भारतीय समाज में बहुमूल्य स्थान रखता है और यह एक आदर्श है जो जीवन को

संस्कारी ढंग से जीना सिखाता है।

डॉ. बेदी ने अपने वक्तव्य में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी को एशिया के समस्त देशों के महापुरुषों में महान विभूति व प्रेरणास्रोत बताया और कहा कि स्वामी जी ने आर्य समाज की स्थापना से समाज को शिक्षा, जाति व धर्म से सम्बन्धित नई दृष्टि एवं नए विचार दिए।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

www.thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 12 फरवरी 2017 से 18 फरवरी 2017

यज्ञ रचा, दान कर

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

न त्वां शतं चन हुतो, राधो दित्सन्तमामिनन्।
यत् पुनानो मखस्यसे।।

ऋग् ९.६१.२७

ऋषिः **अमहीयुः आङ्गिरसः**। देवता **पवमानः सोमः**। छन्दः **गायत्री**।

● (हे आत्मन्!), (**राधः**) धन को, (**दित्सन्तं**) दान करना चाहते हुए, (**त्वा**) तुझे, (**शतं चन**) सौ भी, (**हुतः**) कुटिल वृत्तियाँ व कुटिल जन, (**अ आमिनन्**) हिंसित अर्थात् मार्ग–च्युत न कर पायें, (**यत्**) जब, (**पुनानः**) (स्वयं को) पवित्र करता हुआ। (तू), (**मखस्यसे**) यज्ञ रचाता है।

● हे पवमान सोम! हे स्वयं को तथा मन, बुद्धि आदि को पवित्र करने वाले सात्विक–वृत्ति जीवात्मन्! जब तू परोपकार का यज्ञ रचाता है और अपना धन किन्हीं सत्पात्र व्यक्तियों को या संस्थाओं को दान देने का संकल्प करता है, तब बहुत–सी कुटिल स्वार्थ–वृत्तियाँ और बहुत–से कुटिल मनुष्य तेरे उस दान–व्रत की हिंसा करना चाहते हैं और तुझे दान के मार्ग से विचलित करने का प्रयत्न करते हैं। स्वार्थ–वृत्ति कहती है कि सहस्त्र, दश सहस्त्र, पचास सहस्त्र, लाख, दो लाख रूपया तुम अन्यों को दान कर कर रहें हो, तो क्या स्वयं भूखे मरना चाहते हो? देखो, सब अपनी सम्पति बढ़ा रहे हैं; जो सहस्त्रपति है वह लक्षपति बन रहा है, जो लक्षपति है वह करोड़पति बन रहा है। उनके पास कई–कई कोठियाँ हैं, मोटरकारें हैं, सेवक हैं। क्या दान का ठेका तुमने ही लिया है? क्या तुम्हारे ही भाग्य में यह लिखा है कि स्वयं तो मोटा–झोटा पहनो, रूखा–सूखा खाओ, झोपड़ी जैसे मकानों में रहो और दूसरों पर धन लुटाओ। पहले अपनी और अपने कुटुम्ब की स्थिति सुधारो, फिर अन्यों की सुध लेना। हे आत्मन्! तू उस स्वार्थ–वाणी को मत सुन। तुझे दान करने के लिए उद्यत देख कई स्वार्थी परिचित मनुष्य भी आकर मिथ्या ही आलोचना करते हैं कि तुम जिस संस्था को दान करने जा रहे हो, उसकी आन्तरिक अवस्था को भी जानते हो? उनमें सब खाऊ–पिऊ बैठे हैं, तुम्हारा दिया हुआ दान उन्हीं के पेट में जाएगा। हे आत्मन्! तू उन उन स्वार्थी जनों के भी कुटिल परामर्श पर ध्यान मत दे। सौ प्रकार की स्वार्थ–भावनाएँ और सौ स्वार्थी–जन भी तुझे तेरे दान के संकल्प से विचलित न कर सकें।

हे मेरे आत्मन्! वेद–शास्त्रों की वाणी सुन, जो तुझे दान के लिए प्रेरित कर रही है। तू अपनी कमाई में से प्रतिदिन या प्रतिमास कुछ निश्चित प्रतिशत दान–खाते में डाल और उसे लोक–कल्याण में व्यय कर। दान से दक्षिणा पानेवाले का तो हित होता ही है, उससे भी अधिक हित और मंगल दाता का होता है, यह वैदिक संस्कृति की भावना है। इसके विपरीत, "अकेला भोग करनेवाला मनुष्य पाप का ही भोग करता है"। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

आनन्द गायत्री कथा

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

पिछले अंक में चर्चा हो रही थी कि यज्ञ से वह सुबुद्धि प्राप्त होती है। जो मनुष्य का स्वास्थ्य, बल, धन, राज्य, परिवार, सम्मान, अवस्था और कीर्ति से सुसम्पन्न कर देती है। प्रायः सुबुद्धि अथवा सुमति का अर्थ ज्ञान या बुद्धि होता है। बुद्धि आत्मा का नहीं, अपितु इस शरीर का और प्रकृति का अंश है। यज्ञ का कोई नहीं त्यागता। जो समझता है और जानता है, वह यज्ञ कभी नहीं त्यागता, यज्ञ से कभी विमुख नहीं होता। जो यज्ञ को त्याग देता है, उसे ईश्वर भी त्याग देता है। यज्ञ के साथ हिंसा करना धर्म नहीं है। लोक और परलोक के सम्बन्ध में मनुष्य का धर्म पूरा होता है, वह है गायत्री मन्त्र। गायत्री का शाब्दिक अर्थ है वह मन्त्र जिसको गाने से, जिसका जाप करने से मनुष्य का उद्धार हो जाता है। गायत्री सर्वप्रथम आयु देती है। ऐसी आयु जिसमें प्राण हो।

––अब आगे

वेद कहता है– 'आयु के साथ–साथ गायत्री अपने जाप करने वाले को प्रेरणा देती है; रोग और निर्बलता उसके पास नहीं आती। आए तो शीघ्र ही निवृत्त हो जाती है।' किन्तु केवल आयु और स्वास्थ्य ही तो मनुष्य की इच्छा नहीं। वह सन्तान भी चाहता है, और वेद कहता है– 'गायत्री सन्तान देती है, पुत्र देती है।'

किन्तु क्यों जी! सन्तान हो जाए अधिक। उन्हें खिलाने के लिए, पालने के लिए कुछ हो नहीं, तो फिर मनुष्य क्या करेगा? गायत्री माता बहुत अच्छी है, सन्तान देती है। हो गई सन्तान– दो–चार–आठ–दस–पन्द्रह–बीस। उनके खाने के लिए यदि नहीं तो उनका क्या करें? क्या अनाथालय में भेज दें? नहीं; गायत्री का जाप करने वाले की सन्तान अनाथालयों में नहीं जाती। वेद कहता है– 'गायत्री अपने जाप करने वाले को पशु, घोड़े, गाय, बैल, धन, अन्न, भूमि, फल क्षेत्र सभी कुछ देती है।

परन्तु देखो मेरी माताओं! देखो मेरे बच्चों! मनुष्य की इच्छा यह सब लेकर भी पूरी नहीं होती। आयु, प्राण, सन्तान, घोड़े, हाथी, मोटर–कारें और वायुयान, सब–कुछ मिल जाए, तो भी एक इच्छा मन में रहती है– कीर्ति की इच्छा। इस बात की इच्छा कि उसका सम्मान हो, उसके वंश का विस्तार हो।

और वेद कहता है कि गायत्री अपने जाप करने वाले को सुयश देती है।

केवल यही नहीं; वेद तो इससे आगे भी कहता है– 'गायत्री हमें ब्रह्मवर्चस् (मुख की कान्ति) को भी देती है, जिसे देखते ही प्रत्येक दर्शक झुक जाता है। गायत्री का जाप करने वाले के मुख–मण्डल पर तेज होता है।'

ये सात सांसारिक पदार्थ हैं जो कि गायत्री के जाप से उपलब्ध होते हैं, किन्तु इन पदार्थों का सम्बन्ध तो इस लोक से है और गायत्री केवल इस लोक का नहीं, परलोक का भी सुधार करती है। वेद कहता है– "इन सब पदार्थों को देकर ही गायत्री माता, तू मुझे ब्रह्मलोक में ले जाती है, तू मोक्ष दिला देती है।"

अब बताइए, हो गया कि नहीं लोक और परलोक का सुधार? यह सुधार यज्ञ से भी होता है, गायत्री मन्त्र से भी; और यदि यज्ञ गायत्री मन्त्र से हो तो समझिए कि सोने पर सुहागे का काम हो गया है।

इन सब बातों को सुनकर आपके मन में आता होगा कि क्या ही अच्छा होता कि हम भी गायत्री का जाप करते! काश, हम अपनी आयु को नष्ट न करते! किन्तु घबराओ नहीं, जितनी आयु शेष है उसी में गायत्री का जाप करो, उसी से कल्याण होगा। एक कहानी सुनाता हूँ आपको, पहले भी कई स्थानों पर सुना चुका हूँ। आज फिर सुनाता हूँ।

एक था राजा, शायद भारत के दक्षिण में। एक दिन वह आखेट के लिए जंगल में गया। मार्ग भूल गया, देर हो गई, भूख और प्यास से व्याकुल होने लगा। तभी देखा कि जंगल में एक लकड़हारा लकड़ियाँ काट रहा है। बहुत पेड़ कट चुके हैं; थोड़े–से बाकी हैं। उन्हीं में से एक पेड़ की शाखाओं को वह नीचे गिरा रहा है। राजा ने उसके पास जाकर कहा– 'भाई! मैं भूखा हूँ, बहुत प्यास लगी है, तुम्हारे पास खाने को कुछ है क्या? लकड़हारे ने कहा– 'है, आओ, बैठो! दूर इधर एक बावड़ी है। मैं वहाँ से पानी लाता हूँ। तुम यह रोटी खाओ!' और पोटली से निकालकर एक मोटी–सी रोटी उसने राजा के सामने रख दी। थोड़ा–सा शाक भी रख दिया। राजा ने उसको खाया। लकड़हारे द्वारा लाया हुआ पानी पिया। शांत होकर कहा– "मैं अमुक स्थान का राजा हूँ। घर का मार्ग भूल गया हूँ।" लकड़हारे ने मार्ग बतला दिया।

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

www.thearyasamaj.org

आर्यसमाज के वेदसम्मत 10 नियमों के आदर्श पालक ऋषि दयानन्द

● मनमोहन कुमार आर्य

आर्यसमाज की स्थापना 10 अप्रैल, सन् 1875 को ऋषि दयानन्द सरस्वती ने मुम्बई में की थी। इसका उद्देश्य था विलुप्त वेदों की यथार्थ शिक्षाओं का जन–जन में प्रचार और उसके अनुरूप समाज व देश का निर्माण। महर्षि ने आर्यसमाज की स्थापना उनके वेद विषयक विचारों के प्रशंसकों व अनुयायियों के अनुरोध पर की थी। आर्यसमाज की स्थापना की आवश्यकता क्यों पड़ी, यह प्रश्न समीचीन है। महर्षि दयानन्द ने सप्रमाण यह तथ्य देश की जनता के सामने रखा था कि सृष्टि के आरम्भ से महाभारत काल के लगभग 1,96,0848 अरब वर्षों में भारत सहित भूमण्डल पर वेदों का प्रचार–प्रसार था। आर्यों का सार्वभौमिक चक्रवर्ती राज्य था और वेदों के अनुसार ही सर्वत्र व्यवस्थाएँ एवं परम्पराएँ प्रचलित थीं। महाभारत युद्ध एक ऐसा महायुद्ध था जिसमें विश्व के अनेक देशों के राजाओं ने कौरव व पाण्डव पक्ष में सम्मिलित होकर युद्ध में भाग लिया था। इस युद्ध में जो विनाश हुआ उसका प्रभाव भारत व सम्पूर्ण विश्व पर पड़ा। महाभारत युद्ध के इस दुष्प्रभाव के कारण राजनैतिक, सामाजिक व शैक्षिक सभी व्यवस्थाएँ अस्त–व्यस्त हो गईं थीं। इसका कुपरिणाम यह भी हुआ कि धर्म व सामाजिक परम्पराएँ जो वेद के अनुसार चलतीं थीं, वेदों के समुचित अध्ययन–अध्यापन न होने के कारण उनमें अज्ञान व अन्धविश्वास उत्पन्न होने लगे। इसका कारण यह था कि ऋषि–मुनियों द्वारा वेद के गम्भीर विषयों पर जो व्यवस्थाएँ दी जातीं थीं, ऋषियों की अनुपस्थिति के कारण वे परम्पराएँ भी समाप्त हो चुकीं थीं। अज्ञान व अन्धविश्वास उत्पन्न होने आरम्भ हुए और समय के साथ–साथ इनमें वृद्धि होती गई। हमारा देश वर्णाश्रम व्यवस्था पर आधारित था जिसमें ब्राह्मण वर्ण अन्य तीनों वर्णों की अपेक्षा प्रमुख था। ब्राह्मणों के कर्तव्य हैं– वेदों का पढ़ना और पढ़ाना, यज्ञ करना व कराना तथा दान देना व दान लेना। ऋषियों व वेदों के मर्मज्ञ विद्वान् न होने के कारण अल्पज्ञ पण्डितों में अज्ञान के कारण देश व समाज में अनेक मिथ्या विश्वास प्रचलित हुए जो आज तक चले आए हैं और उनमें उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है। यदि मुख्य अन्धविश्वासों की चर्चा करें तो इनमें मूर्तिपूजा, फलित ज्योतिष, अवतारवाद, मृतक श्राद्ध, स्त्री व शूद्रों को वेदाध्ययन व विद्याध्ययन से वंचित करना आदि सम्मिलित थे। गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली भी ध्वस्त हो गई व वेदाध्ययन भी प्रायः समाप्त हो गया। अज्ञान व अन्धविश्वासों के ही कारण समाज में जन्मना शूद्र वर्ण व दलित बन्धुओं के प्रति असमानता, अप्रीति, अस्पृश्यता की भावना, उन पर नाना प्रकार का अन्याय, शोषण व उन्हें मनुष्योचित सामान्य अधिकारों तक से वंचित किया गया। उनके प्रति ऐसे कठोर विधान भी किए गए जो निन्दनीय थे। अतः इन सभी अन्धविश्वासों व मिथ्या परम्पराओं से समाज कमजोर होता रहा और परिणामतः मुस्लिमों व उसके बाद अंग्रेजों का गुलाम हो गया। आज भी अज्ञान व अन्धविश्वास की यह बुराई समाप्त व कम होने के स्थान पर वृद्धि को ही प्राप्त हो रही है जिससे देश के भविष्य पर भी प्रश्न चिह्न लग गया है।

सन् 1863 में मथुरा में प्रज्ञाचक्षु दण्डी स्वामी विरजानन्द सरस्वती से अपना अध्ययन पूरा कर ऋषि दयानन्द (1825–1863) कार्यक्षेत्र में उतरते हैं। इससे पूर्व वे प्रायः सारे देश का भ्रमण कर देश में अविद्या के विविध हानिकारक प्रभावों का प्रत्यक्ष अनुभव कर चुके थे। अध्ययन की समाप्ति पर स्वामी दयानन्द ने मथुरा से आगरा जाकर धर्म प्रचार आरम्भ कर दिया। आगरा में रहते हुए उन्होंने वेदों की आवश्यकता अनुभव की और उसकी प्राप्ति के लिए प्रयत्न किए। वेदों की प्राप्ति के लिए उन्होंने ग्वालियर, कैरोली, जयपुर आदि की यात्रा की। अनुमान है कि उन्हें कैरोली में वेद प्राप्त हुए और वहाँ पर्याप्त समय रुक कर उन्होंने वेदों का पर्यालोचन, सूक्ष्म अध्ययन किया और उससे उन्हें जो बोध हुआ उसका मंथन कर युक्ति व तर्क की सहायता से धार्मिक व सामाजिक विषयों से संबंधित सत्य व असत्य मान्यताओं का निर्धारण किया। वह इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि संसार के समस्त साहित्य में वेद ही ईश्वरीय ज्ञान है और धर्म विषयक सभी मान्यताओं की परीक्षा व उनके निर्धारण में यही स्वतः प्रमाण व परम प्रमाण है। इसके बाद समय–समय पर उन्होंने ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना की सन्ध्या की पुस्तक, भागवत पुराण की मिथ्या मान्यताओं का खण्डन, समस्त वैदिक सिद्धान्तों, आर्यावर्त्तीय एवं विदेशी मतों की समीक्षाओं से युक्त विश्व के अद्वितीय ग्रंथ **"सत्यार्थ प्रकाश"** की रचना की। स्वामी जी के इन लेखन कार्यों व उपदेशों से प्रभावित होकर समाज के निष्पक्ष एवं बुद्धिमान प्रगतिशील लोगों ने अपने पूर्व मतों को छोड़कर वेदमत को स्वीकार किया। सन् 1869 में आपने काशी में मूर्तिपूजा पर वहाँ के दिग्गज लगभग 30 विद्वानों के साथ शास्त्रार्थ किया। इस शास्त्रार्थ में प्रतिपक्षी विद्वान् स्वामी जी के मूर्तिपूजा विषयक प्रश्नों के वेद से प्रमाण प्रस्तुत न कर पाए जिससे मूर्तिपूजा को वेद सम्मत सिद्ध नहीं किया जा सका। वेदों में मूर्तिपूजा का विधान न होने से मूर्तिपूजा वेद सम्मत सिद्ध नहीं हुई। सन् 1875 तक स्वामी दयानन्द जी देश के अनेक भागों व प्रान्तों में घूम–घूम कर वेदोपदेश आदि के द्वारा प्रचार व जागृति उत्पन्न करते रहे और यथावसर अन्य मतों के विद्वानों से शास्त्रार्थ, शंका–समाधान व शास्त्र चर्चा भी करते रहे। उनके द्वारा नए–नए ग्रंथों का लेखन भी जारी रहा। आपके सत्यार्थप्रकाश से इतर तीन प्रमुख ग्रन्थ '**ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका**', '**संस्कार विधि**' एवं '**आर्याभिविनय**' हैं। इन कार्यों को सम्पन्न करने के बाद आपने चार वेदों का सरल व सुबोध संस्कृत–हिंदी भाष्य का कार्य भी आरंभ किया। मृत्यु के समय तक आपने यजुर्वेद का भाष्य पूरा कर प्रकाशित करा दिया था। 10 मण्डलों वाले ऋग्वेद का भाष्य जारी था जिसमें से प्रथम 6 मण्डलों का पूर्व एवं सातवें मण्डल का आंशिक भाष्य स्वामी जी द्वारा पूर्ण हो सका। इन सभी ग्रन्थों के अतिरिक्त स्वामी जी ने अनेक लघु ग्रन्थ भी लिखे हैं जिनमें से कुछ हैं **पंचमहायज्ञ विधि, चतुर्वेद विषय सूची, व्यवहारभानु, गोकरुणानिधि, आर्योद्देश्यरत्नमाला, संक्षिप्त आत्मकथा, संस्कृत वाक्य प्रबोघ** आदि अनेक ग्रन्थ। स्वामी जी ने संस्कृत व्याकरण के भी अनेक ग्रंथों की रचना की है।

मुम्बई में स्वामी जी के प्रवास के अनन्तर आपके अनेक भक्तों ने आपसे वेदों का प्रचार प्रसार करने के उद्देश्य से आर्यों का देश स्तर का एक संगठन बनाने हेतु आर्यसमाज की स्थापना करने का अनुग्रह किया। स्वामी जी ने इस पर विचार किया और कुछ चेतावनी देते हुए इसकी अनुमति दी और 10 अप्रैल, 1875 को मुम्बई के गिरिगाँव मुहल्ले में आर्यसमाज की स्थापना सम्पन्न हो गई। आर्यसमाज की स्थापना के अनन्तर इसके उद्देश्य व नियम निर्धारित हुए जिनका बाद में संशोधन कर इनकी संख्या 10 निर्धारित हुई। यह नियम हैं, 1–सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदिमूल परमेश्वर है। 2–ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है, उसी की उपासना करनी योग्य है। 3–वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। 4–सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए। 5–सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए। 6–संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना। 7–सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए। 8–अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए। 9–प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए। 10–सब मनुष्यों को सामाजिक, सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

ऋषि दयानन्द ने आर्यसमाज के जो उपर्युक्त 10 नियम बनाए हैं वे संसार में विद्यमान सभी सामाजिक एवं धार्मिक संस्थाओं में सर्वोत्तम एवं स्वर्णिम नियम हैं। स्वामी दयानन्द जी के जीवन में इन सभी नियमों का जीवन्त आदर्श रूप देखने को मिलता है। प्रथम नियम की बात करें तो यह विज्ञान से सम्बन्धित है। ईश्वर सभी सत्य विद्याओं का आदि मूल है, अन्य कोई सत्ता नहीं। इससे यह भी ज्ञात होता है कि संसार अभाव से और न बिना किसी कर्ता के उत्पन्न हुआ है। ऋषि दयानन्द द्वारा निर्मित यह नियम विज्ञान की कसौटी पर सत्य सिद्ध होता है। हमें नहीं लगता कि कोई मनुष्य या वैज्ञानिक किसी युक्ति या तर्क से इसे अस्वीकार कर सकता है। अस्वीकार करने का अर्थ ईश्वर को न मानना और फिर सृष्टि को बिना कर्ता के मानना होगा जो कि असम्भव होने से अस्वीकार्य है। ईश्वर की इस सृष्टि का निमित्त कारण है। ऋषि दयानन्द ने इस नियम को बनाया भी और यह उनके जीवन में उनके उपदेशों व लेखन में यह नियम सम्पूर्णता से स्वीकार्य दृष्टि गोचर हुआ है। इसका उदाहरण उनका ईश्वर के प्रति पूर्ण विश्वास और समर्पण का होना भी रहा है। दूसरे नियमे में ईश्वर के जो गुण, कर्म, स्वभाव आदि बताए व कहे हैं, उन्हें स्वामी दयानन्द जी ने अपने सभी ग्रंथों में वेद प्रमाणों, तर्क व युक्तियों से सत्य सिद्ध किया है। उनके जीवन के अन्तिम क्षण तक उन्होंने इस नियम में विश्वास रखा व उसके अनुरूप ही व्यवहार भी किया। तीसरा नियम वेद के संबंध में है। स्वामी जी ने वेदों को ईश्वरीय ज्ञान सिद्ध करने सहित उसे सब सत्य विद्याओं का पुस्तक बताया व सिद्ध किया है। स्वामी दयानन्द की पुस्तक ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका इस तीसरे नियम को अनेकानेक उदाहरणों व विविध विषयों के वर्णनों को सिद्ध करती है। वैदिक विज्ञान विषय पर पं. कपिल देव द्विवेदी जी ने पुस्तक लिख कर इस नियम की पुष्टि की है। आर्य विद्वानों के प्रायः सभी ग्रन्थ इसका समर्थन करते हैं। स्वामी दयानन्द का जीवन भी इस नियम के पालन व इसके प्रचार के लिए ही समर्पित था। आज भी यह सिद्धान्त अकाट्य होने से स्वामी दयानन्द दिग्विजयी हैं। चौथे नियम से दसवें नियम तक के सात नियम सभी मनुष्यों व सभी मतों–सम्प्रदायों द्वारा स्वीकार्य नियम हैं। ये नियम एक प्रकार से वैश्विक सत्य अर्थात् यूनिवर्सल ट्रुथ हैं। इनका कोई विरोध नहीं कर सकता। स्वामी जी का जीवन इन नियमों की शिक्षाओं व भावनाओं से ओत–प्रोत था जिसका अनुभव हर पाठक करता है जिसने उनके सभी जीवन चरित व ग्रंथों को पढ़ा है। अतः स्वामी दयानन्द आर्यसमाज के दस स्वर्णिम नियमों के आदर्श धारणकर्ता एवं पालक रहे हैं। जो मनुष्य वा व्यक्ति अपने जीवन को सफल करना चाहते हैं, उन्हें उनका अनुयायी व उन जैसा ईश्वर व वेद भक्त बनना ही होगा। नहीं बनेंगे तो जन्म–मरण के चक्र से मुक्त नहीं हो सकते। उनका वेद प्रचार और आर्यसमाज की स्थापना का उद्देश्य लोगों को जन्म–मरण के चक्र व दुखों से मुक्ति दिलाना था। यह बात उनके अनुयायी भावनाओं में बहकर नहीं अपितु दर्शन शास्त्र के सिद्धान्तों का मनन कर स्वीकार करते हैं। संसार में केवल वेद ज्ञान ही पूर्ण सत्य एवं मुक्ति का मार्ग है। महर्षि दयानन्द ने इस मार्ग पर चलकर स्वयं आदर्श प्रस्तुत किया है और अपने प्राणों की आहुति दी है। आइए! उनके जीवन व कार्यों का मनन करें सत्य को स्वीकार करें। इति। ओ३म् शम्।

पताः 196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोन : 09412985121

www.thearyasamaj.org

डरा सो मरा, यम-प्रेम किया वही सच्चा जिया, पाया भी प्रभु को

● आर्य प्रहलाद गिरि

महर्षि दयानन्द ने सच ही कहा है कि 'जो व्यक्ति जीवित देवताओं (माता, पिता, आचार्य, अतिथि आदि) को छोड़कर मृत देवों की मूर्तिपूजा करता है, वह यदि मूर्ख कायर न हो तो भी मूर्ख–कायर बन ही जाता है।'

सभी धर्मों के इतिहास पढ़ने पर अब मैं दावे के साथ कहता हूँ कि हिन्दुओं में सिर्फ सिक्खों को छोड़कर इसके जैसा मूर्ख और कायर न तो मुसलमान होते हैं और न इसाई। वर्ना मात्र पंद्रह–बीस सौ वर्षों में ही इतनी तेजी से दुनिया भर में वे इस तरह से नहीं फैल जाते कि हिन्दुओं को भी अपने ही घर में सिर छुपाने को सोचना पड़े।

बुद्ध काल और गुप्तकाल यानि जब से भारत में मूर्तिपूजा प्रचलित हुई, तभी से महान् आर्यावर्त्त भारतवर्ष कहलाने वाला विश्व–सुख्यात यह प्राचीनतम देश हिन्दुस्तान से भी इंडिया की ओर लुढ़कते हुए मिटने–बिखरने लग गया।

पुरोहितों के पाखंड से त्रस्त लोग प्रशंसित बौद्धों की शरण में चले तो गये, किन्तु बौद्ध समाज भी जब विषयी और अत्याचारी होकर अपने ही हिन्दुओं (उस समय के आर्यों) को निगलने लगे थे तो इस तथाकथित सत्य–सनातन–वैदिक–धर्म को बचाने हेतु पहली सदी में गीता नामक एक सुंदर–संक्षिप्त पुस्तक रची गयी। काशी विश्वनाथ मंदिर में सबसे नीचे रखा गया तुलसी कृत रामायण की तरह झूठे प्रचारित किया गया कि श्री कृष्णोद्घोषित इस गीता को वेदव्यास जी ने लिखा है। प्रबल बौद्धों के तीनों पुस्तकों (त्रि–पिटक–सूत्र पिटक, विनय पिटक, अभिधर्म पिटक) के अमोघ जवाब में मद्रास के बादरायण, आदिशंकरादि अत्यंत चतुर हमारे धर्म रक्षक विद्वानों ने भी प्रस्थान–त्रयी (गीता, उपनिषद्, वेदांत दर्शन) को लिखे, जिनमें सर्वाधिक सफल और लोकप्रिय गीता ही हुई। महाभारत कालीन बताकर यदि उस समय गीता न लिखी जाती तो बचे–खुचे सारे हिंदू भी बौद्ध बन गये होते और मूर्ति पूजक कायर बौद्धों को मार देना या मुस्लिम बना लेना–अरबी आक्रांताओं के लिये अत्यंत सरल था। फिर भी पुरानी और निष्क्रिय (अप्रासंगिक) हो चुकी अपनी बूढ़ी दादी की तरह भारतीय वैदिक संस्कृति को बौद्धों से बचाने वाली इस गीता को मैं कृतज्ञता पूर्वक प्रणाम कर तो लेता हूँ, किन्तु सच और झूठ मिश्रित इसकी छलपूर्ण बातों में बौद्धों के साथ–साथ हमारे लोग भी वेद विमुख होकर महाभारत के आदर्श नायक श्री कृष्ण को ही परमात्मा मानने का पाप करने लग गए।

मुसलमानों और इसाइयों के धर्मग्रंथ आज भी कुरान और बाइबल ही है, जबकि हमारा धर्मग्रंथ वेद से खिसक कर गीता और हनुमान चालीसा पर आ गया। हनुमान जी महावीर थे, किन्तु इनकी चालीसा पढ़ने पर जरा सी भी वीरता नहीं जगती, उसी तरह समझिए कि सड़कों के किनारे भीड़ जुटाने वाले जादूगरों जैसी गीता की मायावी बातें सिर्फ वेद विरोधी बौद्धों को आकर्षित करने हेतु ही लिखी गयी थी। यदि इसे पढ़ने से वीरता जगती तो मीर कासिम, महमूद गजनी, मुहम्मद गोरी से लेकर औरंगजेब तक के कुरानी–वीरों के सामने हमारे लाखों गीता गायक क्यों अपनी–अपनी माताओं के दूध लजवाते रहे? गीता रहस्यज्ञ मेरे पूज्य तिलक जी को अपने आर्यावर्त्त छोड़, उत्तरी ध्रुव को पूर्वजों की भूमि क्यों मानना पड़ा?

औरंगजेबी तलवार को गुरुगोविंद सिंह और वीर शिवाजी क्या गीता से ही प्रेरित होकर रोक पाये थे? नहीं!

गीता में योग, कर्म, युद्ध (संघर्ष) और मृत्यु के बारे में अच्छी बातें कही तो गयी हैं, किन्तु तोतारटंती भाषा में। ढपोर शंखोऽहम् वदामि च ददामि ना।

गीता पाठी लोग यदि इस सांसारिक–जीवन को एक पाठशाला और मृत्यु को फाइनल–परीक्षा समझ लेते तो फिर इन्हे मुठ्ठीभर अरबी–वीरों (जिन्हें हम द्वेषवश आक्रांता ही कहते हैं) के सामने न गिड़गिड़ाना पड़ता, न अपनी इज्जत लुटते हुए देखना पड़ता, न बेमौत कुत्तों सा मरना पड़ता और न अरब–इरान के बाजारों में जाकर गुलामों–सा कौड़ी के भाव में बिकना पड़ता।

आज भी हमारे धर्माचार्य लोग हिन्दुओं को वेद और एक निराकार ओम् से हटाकर मूर्तिपूजा के द्वारा ही पाखंडों में सम्मोहित–भ्रमित करते जा रहे हैं। जो जितना ज्यादा मूर्तिपूजा करता या करवाता है, वो उतना ही बड़ा मूर्ख या ठग होता है।

मुस्लिम ईसाइयों में मूर्तिपूजा अत्यल्प है, इसीलिये ये लोग जीवन की उपयोगिता और मृत्यु (कयामत) की महत्ता को समझ कर अनासक्ति से जीते हैं। फलतः इनके धर्म दिनदूना रात चौगुना बढ़ रहे हैं। और इधर हम हरेक पूजा–त्योहारों में प्रतिवर्ष हजारों की संख्या में भीड़ों, भगदड़ों, डूबने, जलने आदि धार्मिक–दुर्घटनाओं में मरते–घटते जा रहे हैं। अभी–अभी इसी छठ में सूर्यदेव को अर्घ्य देते हुए सिर्फ बिहार में ही 50 लोग फिसल कर डूब गए।

राम जन्म भूमि का विवादित ढांचा तोड़ने में शहीद हुए पुण्यात्मा रामकुमार शरद कोठारी बंधुओं जैसे धर्मयोद्धाओं की राह तो आज वीरान–सी ही हो गयी है। हम मुख में लक्ष्मीबाई, खुदीराम, आजाद, भगतादि के जयकारे लगाते हुए भी मूर्खतावश लोमश, मार्कंडेय बनने की मृगतृष्णा में बढ़ते जा रहे हैं। जबकि कठोपनिषद् में नचिकेता–प्रसंग हमें बताता हैं कि–"संसार का उपकार यानि धर्म रक्षार्थ लड़ते हुए मर जाना (आत्माहुति देना) अमरत्व पाने का सरलतम मार्ग है। वस्तुतः यम से जो जितना डरता है, यम उसे उतना ही अधिक मारते हैं।"

कायरों की मृत्यु देख, यम भी नफरत करते हैं।
खुश होते उस वीर को पा, जो खुद जा यम से लड़ते हैं।।
जोरावर, हकीकत राय, कोठारी, बलि–वेदी के तारे हैं।
अभिमन्यु भी लड़ अमर हुए, जबकि खलों से हारे हैं।।
'प्रगति चाहो, संघर्ष करो!'–कहे शहीद वीर अशफाक।
हर जीवंत–जाति की होती सजग–युद्ध ही सदा खुराक।।

वेद (यजु–31.18) कहते हैं कि इस संसार को, जीवन–चक्र को और वेद को पढ़–समझ कर जो व्यक्ति सृष्टिकर्त्ता–महानतम ईश्वर को जान जाता है, वही जीवन की परीक्षा यानि मृत्यु में कभी फेल नहीं होता, बल्कि मोक्ष–परमपद को शाश्वत–अमृत–पुरस्कार भी अनायास ही पा लेता है। वर्ना पशु–पंक्षियों–कायरों–सा मरने वालों को तब तक मरते (जनमते) ही रहना पड़ता है, जब तक परीक्षा पास न कर जाये मुमुक्ष इस्लाम में इसीलिये पुनर्जन्म नहीं होता है।

रश्मिरथी में दिनकर जी कहते हैं:–

"जो नर आत्मदान से अपना जीवन–घट भरता है।
वह मृत्यु के मुख में जा के भी न कभी मरता है।।
जहाँ कहीं हरियाली जगत् में, जहाँ कहीं उजियाला।
वहाँ रहा है कोई तन का मूल्य चुकाने वाला।।"

"जीने के मौसम बहुत मिलते, जान देने की रुत रोज आती नहीं।
वीरों की वो जिंदगी तो नहीं, जो मृत्यु को गले खुद लगाती नहीं।।"

"कुछ पाकर खोना है, कुछ खोकर पाना है।
जीवन का मतलब ही आना और जाना है।।"

इस सुंदर मनोरम पार्क (संसार) को ईश्वर ने हमें एक ही आँख से एक ही जगह पर ज्यादा देर बैठे रहकर देखने के लिये नहीं बनाया है। इस चंचल संसार में हम भी स्वेच्छा से अपना स्थान और शरीर बदलते रहें, यही सृष्टिकर्त्ता का वैदिक अनुशासन है।

जैसे कोई रेलयात्री अपनी आरक्षित–सीट को स्थायी मान कर वहाँ अपना नाम और चित्र चिपका दे या कोई छात्र अपनी कक्षा के सीट पर ही स्थायी सुख–सुविधाएँ जुटाने लगे, तो उसकी ये गैर–अनुशासित उद्दंडता और मूर्खता ही होगी। उसी तरह इस तन और भवन को स्थायी मान कर मृत्यु से डरना या जिंदगी को बीमार बना देना–दोनों दशा हम हिंदुओं के लिए लज्जास्पद है।

किन्तु अपनी मूर्खता और कायरतावश हम हिन्दू लोग इसी लज्जास्पद दशा में अपनी महान् वैदिक संस्कृति से काफी दूर भटक कर मरते–मिटते जा रहे हैं। और हमारे मार्गदर्शक कहलाने वाले सारे पुरोहित–धर्माचार्य (सिर्फ योगर्षि रामदेव बाबा को छोड़कर) धर्मगुरु लोग हमें ही भागवत की भ्रामक कथाएँ सुना–सुना कर लूटने में लगे हुए हैं।

अपने जिंदगी और परिवार को भी दाँव पर लगाकर हिन्दू धर्म की बेहद गंदी हो चुकी गंगा को साफ करने वाले गुरु गोविंद सिंह, महर्षि दयानन्द जैसे बलिदानी संतों की ही आज सख्त जरूरत है:–

"तेरा वैभव अमर रहे माँ, हम दिन चार रहें ना रहें।
राष्ट्र–धर्म की बलि–वेदी पर पुण्य–दीप बन हम भी जलें।।"

पुनः पुकारे आर्यगिरि (हिमालय) वेद–ज्योति लिये हाथ।

सर्वस्व लुटा दे सत्पथ पे, वही आवे मेरे साथ।।

ये राह नहीं है फूलों के, कांटे ही इसमें खिलते हैं!
जमाने भर के दर्द लिए चतुर–हिम्मती ही चलते है!!
क्या ईशा की लाचारी थी कि शूली की ओर चले?
बिस्मिल्ल, भगत, सुकरात, दयानंद खुद मृत्यु से जाके मिले??

जिसने सच्ची आवाज सुनी ये राह वही हैं अपनाते।

क्रूर–कायरों के समक्ष बिन–शस्त्र के वीर वही बन जाते।

झंझट भरी असफलता पे भी जो न सच से हट पाते।

मर के भी अमरों, मर्दों–सा वही सदा रहते मुस्काते।।

शिवमंदिर, निंगा,
आसनसोल (पं. बं.)

www.thearyasamaj.org

भारत के गौरवशाली इतिहास की कुछ घटनाएँ

● खुशहाल चन्द्र आर्य

वैसे तो भारत का गौरवशाली इतिहास आदर्श, नैतिक, शिक्षाप्रद, प्रेरणादायक व संवेदनशील घटनाओं से भरा पड़ा है, परन्तु यहाँ पर कुछ घटनाओं का संक्षिप्त विवरण करते हैं, वे इस भाँति हैः–

1. जब मेघनाद के शक्तिबाण से लक्ष्मण बेहोश हो गया था, तब श्री राम ने हनुमान जी को लंका में भेज कर सुषैण वैद्य को बुला लिया। श्री राम ने वैद्य से कहा कि वैद्यजी! आप मेरे छोटे भाई लक्ष्मण को किसी प्रकार से भी ठीक कर दीजिए नहीं तो मेरा जीवित रहना भी मुश्किल है। तब सुषैण ने कहा "श्रीराम! मैं तो रावण का वैद्य हूँ उसके शत्रु को मैं दवा कैसे दे सकता हूँ। तब श्री राम ने कहा कि वैद्यजी! आप बिल्कुल सही बोल रहे हैं, आप अपना कर्त्तव्य पूरा करो। ईश्वर जो करेगा सो ठीक ही करेगा। यह सुन कर वैद्य ने कहा कि हे श्रीराम! मैं तो आपकी परीक्षा ले रहा था कि श्रीराम कितने धैर्यशाली हैं। मैं वैद्य हूँ मेरा कर्त्तव्य रोगी की सेवा करना है, चाहे वह कोई भी हो, सो मैं लक्ष्मण को जीवित करके ही रहूँगा। यह है अपने–अपने कर्त्तव्य के प्रति निष्ठा का उच्चतम उदाहरण।

2. जब मेघनाद के शक्तिबाण के लगने से लक्ष्मण मूर्छित हो गए तब लंका के वैद्य के कहने से हनुमान जी हिमालय पर्वत से संजीवनी बूटी लाए जिससे लक्ष्मण की बेहोशी खुली और कुछ चेतना में आए तब सुग्रीव ने लक्ष्मण से पूछा कि आपको चोट कहाँ लगी है? और दर्द कहाँ हो रहा है? तब जो लक्ष्मण ने उत्तर दिया वह, भाइयों के प्रेम की पराकाष्ठा है। लक्ष्मण ने कहा कि चोट मुझे कहाँ लगी है, यह तो मैं बता सकता हूँ पर दर्द कहाँ हो रहा है, यह तो भाई श्रीराम ही बता सकते हैं।

3. जब राम लक्ष्मण, सीता की खोज में जंगल में भटक रहे थे, तब वे घूमते–घूमते सुमेरु पर्वत के पास पहुँचे, जिसके ऊपर सुग्रीव जी, हनुमानजी बैठे हुए थे। राम और लक्ष्मण को वनवासी वेष में देखकर सुग्रीव ने समझा कि ये कहीं बाली के गुप्तचर तो नहीं हैं जो मेरी खोज कर रहे हैं, तब सुग्रीव ने हनुमान जी को पता लगाने के लिए नीचे भेजा। हनुमान जी ने पर्वत से नीचे उतरकर, उनसे इतने सुन्दर ढंग से बात की जिसमें व्याकरण की कोई अशुद्धि नहीं थी और विद्वतापूर्ण ढंग से उनसे वार्तालाप किया, तब राम ने लक्ष्मण की ओर संकेत करके कहा कि ऐ लक्ष्मण! यह व्यक्ति यानि हनुमान जी चारों वेदों का विद्वान् दिखाई पड़ता है कारण– इसने हमसे कितनी देर तक वार्तालाप किया पर कहीं पर भी व्याकरण की गलती नहीं की और बहुत ही मधुर भाषा में शिष्टता से बातें की। इससे हमें हनुमान जी एक उच्च कोटि के विद्वान् जान पड़ते हैं। ऐसे व्यक्ति को बन्दर बतलाना कितनी मूर्खता की बात है। सत्य यह है कि इस समय जंगलों में रहने वालो की एक वानर जाति थी। हमीं से मूर्ख पण्डितों ने उसे वानर बना दिया। हनुमान, बाली, सुग्रीव, अंगद सभी मनुष्य थे। उनको वानर कहना, हमारी भूल है।

4. महाभारत के समय जब श्री कृष्ण युद्ध रोकने के लिए आखिरी प्रयोग के रूप में दुर्योधन के पास जाते हैं, तब उससे कहते हैं कि ऐ दुर्योधन! तू सारा राज्य रख, केवल पाँच गाँव पाण्डवों को दे दो। तब दुर्योधन ने कहा कि हे कृष्ण! तुम तो पाँच गाँव की कहते हो, मैं तो युद्ध किए बिना सूईं की नोंक धरने तक की जमीन भी नहीं दे सकता। तब कृष्ण निराश होकर विदुर के घर आना ही चाहते थे, तब दुर्योधन बोला कि हे कृष्ण! भोजन तो करके जाओ, तब कृष्ण ने जो उत्तर दिया वह एक ऐतिहासिक उत्तर है। कृष्ण ने कहा कि ऐ दुर्योधन! भोजन दो ही स्थिति में किया जाता है। पहला अति भूख में, दूसरा खिलाने वाले की भावना अच्छी हो। यहाँ दोनों ही बात नहीं है। मुझे न तो अति भूख लगी है और न तुम्हारा मन खिलाने का है, यह कहकर कृष्ण विदुर के घर चले गए।

5. रामायण में विभीषण जिसको उसके बड़े भाई रावण ने नाराज होकर लंका से निकाल दिया था। वह श्री राम की शरण में चला गया। जैसे ही श्री राम ने विभीषण को देखा तो वे सही बात को समझ गए कि विभीषण अपने भाई रावण से निकाला हुआ मेरे पास आया है। श्री राम ने विभीषण को देखते ही कहा कि आओ लंकेश! बैठो!! तब लक्ष्मण ने कहा कि भाई! आपने विभीषण को लंकेश कैसे कह दिया। अभी तक तो युद्ध शुरु ही नहीं हुआ है। युद्ध में हम जीतेंगे या हारेंगे कुछ नहीं पता, तब श्री राम ने जो बात नहीं, वह स्वर्ण अक्षरों में लिखने योग्य है। श्री राम ने लक्ष्मण से कहा कि हे लक्ष्मण! पहली बात तो यह है कि हम सत्य पर हैं, हमारी जीत होनी है, तब तो विभीषण को लंकेश बना ही दूँगा। यदि किसी कारण से हार गई तो अयोध्या का राज्य तो मेरे पास है, मैं इसे अयोध्या का राज्य देकर अयोध्येश तो बना ही दूँगा। यानि राजा तो बना ही दूँगा। यह है अपने वचनों का पालन करना।

6. महाभारत में यक्ष–युधिष्ठिर के संवाद में ऐसा वर्णन आता है कि जब यक्ष ने युधिष्ठिर के चारों भाइयों भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव के प्रश्नों के उत्तर न देने के कारण उन्हें मूर्छित कर दिया तब युधिष्ठिर ने यक्ष से कहा कि आप मुझसे प्रश्न करो, मैं आपके प्रश्नों के उत्तर दूँगा। तब यक्ष ने काफी प्रश्न किए, युधिष्ठिर ने उसके सभी प्रश्नों के सही उत्तर दे दिए, तब यक्ष ने कहा कि आप अपने एक भाई को जीवित करवा सकते हो। तब युधिष्ठिर ने नकुल को जीवित करने की कही। तब यक्ष ने कहा कि आप भीम तथा अर्जुन जैसे योद्धाओं को छोड़कर नकुल को जीवित करने की क्यों कह रहे हो? तब युधिष्ठिर ने कहा कि मेरी दो माताएँ है। एक कुन्ती दूसरी माद्री। कुन्ती के हम तीन हैं, मैं, भीम और अर्जुन, माद्री के दो हैं, नकुल और सहदेव। कुन्ती का एक बेटा मैं जीवित हूँ ही, माद्री का एक बेटा नकुल जीवित हो जाता है, तो दोनों के एक–एक बेटा जीवित रह जायेगा। युधिष्ठिर की न्यायप्रियता से यक्ष बहुत प्रसन्न हुआ और चारों भाइयों को जीवित कर दिया।

7. छत्रपति शिवाजी के जीवन की एक घटना है कि शिवाजी के 3–4 सैनिकों ने घूमते हुए किसी एक मुस्लिम सुन्दर युवती को देख लिया। उन्होंने यह समझकर कि इस युवती को हम सम्राट शिवाजी को देंगे तो वे हमें काफी पुरस्कार देंगे। इस उद्देश्य से वे सैनिक उस सुन्दरी को पकड़कर राजभवन ले गए और शिवाजी से बोले कि महाराज! हम आपके लिए एक बहुत बढ़िया तौहफा लाए हैं, आप देखकर प्रसन्न हो जाओगे। शिवाजी ने कहा कि दिखाओ, कहाँ, है? तब उन्होंने उस मुस्लिम सुन्दरी को पेश कर दिया। सुन्दरी को देखते ही शिवाजी की आँखे लाल हो गई और कहा कि तुम्हें मेरे पास रहते कितने वर्ष हो गए, अभी तक तुमने अपने स्वामी को नहीं समझा। बड़े दुःख का विषय है, खैर! अब आप कुछ गहने जेवर और कपड़े लाओ, यह मेरी बेटी है और अपने पिताजी से मिलने आई है। पिताजी का कर्त्तव्य है कि वह अपनी बेटी को जेवर, कपड़ों से सुसज्जित करके उसको अपने पति के घर भेजे और वैसा ही किया। यह था हमारे देश के राजाओं का चरित्र, इसलिए भारत "विश्व गुरु" कहलाया।

8. हल्दी घाटी की लड़ाई में जब महाराणा प्रताप मुगलों के सैनिकों से घिर गए थे बहुत जल्दी ही मृत्यु को प्राप्त होने वाले थे, उसी समय सरदार झाल्ला ने अपने स्वामी महाराणा प्रताप को भारी आपत्ति में घिरा देखकर उसको तुरन्त एक स्कीम समझ में आई कि उसका चेहरा महाराणा से मिलता जुलता था, उसने भीड़ में घुस कर महाराणा के सिर का मुकुट अपने सिर पर लगा लिया। मुगल सैनिक सरदार झाल्ला को महाराणा प्रताप समझकर उसके ऊपर टूट पड़े। महाराणा प्रताप को निकलने का अवसर मिल गया। वे युद्ध–भूमि को छोड़कर अपनी जान बचाकर जा ही रहे थे, तब दो मुगल सैनिकों ने महाराणा को जाते हुए देख लिया और उसका पीछा करने लगे। शक्ति सिंह जो महाराणा का छोटा भाई था और वह महाराणा से अप्रसन्न होकर अकबर से जा मिला था और इस युद्ध में अकबर की तरफ से लड़ रहा था, उसने मुगल सैनिकों को पीछा करते हुए देखा तो उसके हृदय में अचानक भ्रातृभाव जागा और उन दोनों सैनिकों को मारकर महाराणा से मिलने चला। उधर महाराणा प्रताप चेतक पर चढ़ा हुआ जा रहा था। तब रास्ते में एक पानी का नाला आ गया। चेतक ने जैसे ही छलांग लगाकर नाला पार किया तो चेतक गिर गया और प्राण दे दिए। महाराणा चेतक के मरने से बहुत दुःखी थे। तब तक अपने छोटे भाई शक्ति सिंह को अपनी ओर आते देखकर तलवार लेकर खड़ा हो गया और कहा कि तुम्हारे लिए तो अब भी काफी हूँ। तब शक्ति सिंह ने कहा, भैया! मैं बैर को भुलाकर आपसे प्रेम से मिलने आया हूँ तब दोनों भाइयों का राम–भरत जैसा मिलाप हुआ और चेतक का वैदिक रीति से दाह–संस्कार करके शक्ति सिंह के घोड़े से दोनों चले गए। वाह रे सरदार झाल्ला सिंह का बलिदान! तूने महाराणा प्रताप के प्राण तो बचा ही दिए साथ ही दो बिछुड़े भाइयों को भी मिला दिया।

9. महात्मा चाणक्य, गुप्त राज्य का महामन्त्री था। यदि वे चाहते तो बड़े से बड़े महल में रह सकते थे, परन्तु वे जंगल में एक कुटिया बनाकर रहते थे और नित्य सन्ध्या, हवन करके राज्य का कार्य देखते थे। बड़े–बड़े राजाओं के प्रतिनिधि, चाणक्य से वहीं कुटिया में जाकर मिलते थे और अपनी–अपनी समस्याओं का समाधान निकलवाते थे। महात्मा चाणक्य राज्य का एक पैसा भी अपने काम में नहीं लेते थे। दीपक और तेल भी अपना अलग रखते थे। जब राज्य का काम होता था तब राज्य के पैसों से खरीदा दीपक व तेल का प्रयोग करते थे और जब अपना कोई व्यक्तिगत काम करते थे अपने पैसों से खरीदे दीपक का प्रयोग करते थे। राज्य से जो वेतन पाते थे उसी में काम चलाते थे। यह था चाणक्य का त्यागमय व स्वच्छ तथा पवित्र जीवन। ऐसे ही व्यक्ति देश की उन्नति व समृद्धि कर सकते हैं। आज के स्वार्थी व रिश्वतखोर मंत्रियों को चाणक्य के जीवन से शिक्षा लेनी चाहिए।

10. महात्मा हंसराज भी महात्मा चाणक्य की भाँति एक सच्चे, ईमानदार, त्यागी, तपस्वी, सेवाभावी, कर्त्तव्यपारायण व उदार हृदय के व्यक्ति थे। जिन्होंने अपने पूरे कार्यकाल में D.A.V. संस्था के प्रधान पद पर रहते हुए बिना वेतन लिए अवैतनिक सेवा की। वे अपने बड़े भाई मुल्क राज से केवल चालीस रुपए महीना लेकर अपना गृहस्थ चलाते थे। वे भी महात्मा चाणक्य की भाँति D.A.V. स्कूल या कॉलेज का एक पैसा भी अपने ऊपर खर्च नहीं करते थे। वे भी पेन दो रखते थे। जब संस्था का काम होता था तब संस्था से खरीदे हुए पेन का प्रयोग करते थे और जब कोई अपना व्यक्तिगत पत्र लिखना हुआ तो अपने पैसों से खरीदे पेन का प्रयोग करते थे। उनकी सच्चाई और ईमानदारी के कारण उनके कार्यकाल में D.A.V. संस्था ने बहुत उन्नति की। ऐसे व्यक्तित्व का देश सदा ऋणी रहेगा। महात्मा हंसराज व महात्मा चाणक्य के जीवन से मैंने भी बहुत कुछ सीखा है और उनके अनुकूल चलने का प्रयत्न करता हूँ।

11. पन्ना धाय का त्यागः– पन्ना राणा सांगा के राजपरिवार में बच्चे खिलाने का

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

www.thearyasamaj.org

पिछले अंक से आगे

(अमर कथाकार और उपन्यास सम्राट् मुंशी प्रेमचन्द की लिखी यह कथा मूलतः उर्दू में लिखी गई थी और उर्दू के प्रसिद्ध साप्ताहिक 'प्रकाश' (लाहौर) में 1929 ई. में प्रकाशित हुई थी। इस पत्र के सम्पादक उर्दू पत्रकारिता के पितामह प्रसिद्ध आर्यनेता महाशय कृष्ण जी थे। इस कहानी के प्रारम्भ से ही ऋषि दयानन्द के पावन चरित्र का प्रभाव परिलक्षित होने लगता है। इसका हिन्दी अनुवाद प्रख्यात आर्यविद्वान् प्रो. राजेन्द्र जी जिज्ञासु ने किया है और इसे उन्होंने 2003 ई. में प्रकाशित भी करा दिया है। उर्दू में इस कहानी का शीर्षक था– 'आपकी तस्वीर'। श्री जिज्ञासुजी के प्रति आभार सहित यह कहानी पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है– सम्पादक)

आपका चित्र!

● मुंशी प्रेमचन्द

भाराजा साहेब के मुख पर उदासी व निराशा के स्थान पर कटुता व कठोरता की लपट चमक उठी।

"देखिए! वे ये पत्र हैं, जो कल गुप्त रूप से मेरे हाथ लगे हैं। इस समय मैं इस बात की जाँच करना निरर्थक समझता हूँ कि ये पत्र मेरे पास किसने भेजे हैं। उसे ये कहाँ से प्राप्त हुए? यह सरफ़राज़ के किसी अशुभचिन्तक का काम हो सकता है। मुझे तो केवल इस बात का पता लगाना है कि ये पत्र मूल हैं या कृत्रिम। मुझे इनके असल होने में तनिक भी सन्देह नहीं है। मैंने सरफ़राज़ की लिखाई (Hand writing) देखी है। उसके वार्तालाप का अनुमान लगाया है। उसकी जिह्वा पर जो शब्द चढ़े हुए हैं उनका अभ्यस्त हूँ। इन पत्रों में वही भाषा, वही शैली है। कुछ भी अन्तर नहीं। वही प्रवाह, वही अभिव्यक्ति है। वही शब्द हैं। इधर तो मैं एक मुस्कान, एक दृष्टि, एक अठखेली के लिए तरसता तड़पता हूँ उधर प्रेमियों के नाम प्रेम–पत्र लिखे जाते हैं। रोष के, रंगीन शिकायतों के दफ्तर खोले जाते हैं। इन पत्रों का मैंने वाचन किया है। हृदय को पत्थर बनाकर पढ़ा है। लहू के घूँट पी–पी कर पढ़ा है।"

राजा साहेब के नयन चिनगारियाँ वर्षाने लगे। "रक्त का घूँट पी–पी कर पढ़ा है तथा अपनी बोटियाँ नोच नोचकर पढ़ा है। आँखों से लहू के कण निकल निकल कर आए हैं। हा! यह द्रोह, यह त्रिया चरित्र!''

''भरे राजभवन में रहकर, मेरे लाड़ प्यार की छाया में जीवन के श्रेष्ठतम उपभोगों का सुख भोगकर मेरी खाकरोबियों (झाड़ू तक लगाना) व मेरे सर्वस्व को पदाक्रान्त करते हुए ये प्रेम पत्र लिखे जाते हैं। मुझे खारे जल की एक बूँद भी नहीं। औरों पर सुगन्धित जल की वृष्टि की जा रही थी। मेरे लिए एक चुटकी भर आटा नहीं दूसरे के लिए स्वादिष्ट व्यंजन परोसे जा रहे थे। आह! तुम कल्पना भी नहीं कर सकते। इन पत्रों को पढ़कर मेरे ऊपर क्या बीती होगी।''

''पहला वलवला जो मेरे दिल में आया वह यह था कि इसी समय तलवार लेकर जाऊँ और इस निष्ठुर के सामने ही, उसी के चरणों में, यह तलवार अपने सीने में चुभो लूँ। उसकी आँखों के सामने एड़ियाँ रगड़–रगड़ कर, तड़प–तड़प कर मर जाऊँ। सम्भवतः मेरे मरणोपरान्त वह मेरे प्रेम का व मेरा मूल्य व महत्त्व जान जाए। मेरे गर्म लहू के झरने उसके पाषाण हृदय को पिघला दें। उस निर्दयी को पता चले कि प्रेम क्या वस्तु है। परन्तु दिल के किसी अज्ञात कोने से यह आवाज़ आई, यह सर्वथा पागलपन है। तुम तो मर जाओगे और जादूगरनी तुम्हारे रत्न भण्डारों व स्वर्ण से अपनी झोलियाँ भरेगी। तुम्हारे उपहारों के बोझ से लदी, मन ही मन में तुम्हारी मूर्खता पर हँसती हुई वह दूसरे ही दिन अपनी वाटिका में चली जाएगी और दोनों तुम्हारी सम्पदा पर मौज मस्ती मारेंगे और तुम्हारी व्यथित आत्मा को तड़पाएँगे।''

सरदार जी! विश्वास कीजिए, यह आवाज़ मुझे अपने ही दिल के किसी कोने से सुनाई दी। मैंने तत्काल तलवार कमर से निकाल दी। वह विचार तज दिया। एक ही क्षण में प्रतिशोध की आग भड़क उठी। दिल में एक लपट भभक उठी। आह! कितनी जी जान को जलाने वाली वह लपट थी। (मूल में 'जांसोज़' शब्द का प्रयोग है। 'जिज्ञासु') कितनी आकुल व्याकुल कर देने वाली वह उत्तेजना थी। मेरे रोम रोम से आग बरस रही थी। उठा कि इसी समय जाकर उसके अन्याय अत्याचार को समाप्त कर दूँ। जिन नयनों की एक दृष्टि के लिए अपनी जान न्योछावर करता था, उन्हें सदा के लिए बन्द कर दूँ। इन हत्यारे विषैले अधरों को सदा के लिए काला कर दूँ। जिस छाती में इतनी उपेक्षा, इतनी अवहेलना, इतना द्रोह भरा हो उसे चीर कर पाँव के नीचे कुचल दूँ–रगड़ दूँ, मसल दूँ। सिर पर लहू सवार हो गया। सरफ़राज़ की समस्त मनमोहक क्रियाएँ, सारा बाँकपन और हाव–भाव, सारा मधुर व्यवहार घृणास्पद व घिनौना प्रतीत होने लगा। उस घड़ी यदि मुझे पता लग जाता कि सरफ़राज़ का किसी ने वध कर डाला है तो सम्भवतः मैं हत्यारे के चरण चूम लेता। यदि यह सुनता कि उसके प्राण पखेरू उड़ने वाले हैं तो उसके दम तोड़ने का तमाशा देखता। मैं हत्या करने का दृढ़ निश्चय करके दोधारी तलवारें लटका कर रनवास में प्रविष्ट हुआ। जिस पर द्वार जाते ही दिल में आशा व भय का द्वन्द्व होने लगता था वहाँ पहुँचकर मुझे क्रूरतापूर्ण प्रसन्नता हुई।

सरदार जी! मैं, उन मनःस्थितियों व मनोभावों को व्यक्त नहीं करूँगा जो उस समय मेरे मन में उपजे थे। वाणी में इतना बल हो तो भी हृदय को इससे उद्वेलित करना उचित नहीं लगता। मैंने कमरे में पग धरा। सरफ़राज़ मस्ती से प्रगाढ़ निद्रा में सोई पड़ी थी। उसे देखकर मेरा जी भर आया। मेरी स्थिति बड़ी विचित्र थी। जी हाँ! वह रोष, आक्रोश न जाने कहाँ लुप्त हो गया। उसके स्थान पर भावुकता से मन छलकने लगा इसका क्या दोष है? अकस्मात् मेरे मन में यह प्रश्न पैदा हुआ इसका क्या पाप है? यदि इसका यही दोष है कि वह मेरी है तो मुझे उसके लिए प्रतिशोध का क्या अधिकार है? यदि वह अपने प्रेमी के लिए इतनी तड़प रही है, इतनी ही आकुल व्याकुल है और इतनी ही बावली है जितना कि मैं हूँ तो इसमें इसका क्या अपराध है? जिस प्रकार से मैं अपने मन से विवश हूँ क्या यह भी अपने मन से विवश नहीं हो सकती? यदि मुझे कोई स्त्री बंदी बना ले और धन–सम्पदा से मेरा प्यार खरीदना चाहे तो क्या मैं उसका दम भरने लगूँगा? सम्भवतः नहीं। मैं अवसर मिलते ही वहाँ से भाग खड़ा हूँगा। यह मेरे द्वारा अन्याय है, अनुचित क्रूर कर्म है। यदि मुझ में वे गुण होते जो इसके अज्ञात प्रेमी में हैं तो क्यों इसका दिल मेरी ओर न खिंचता? मुझ में वे गुण नहीं है जो यह अपने प्रेमी में देखना चाहती है। यदि मुझे कड़वी वस्तु अच्छी नहीं लगती तो स्वभावतः मैं हलवाई की दुकान की ओर जाऊँगा जो मिठाइयाँ बेचता है। सम्भव है कि धीरे–धीरे मेरी रुचि बदल जाए तथा मैं कसैली वस्तुएँ पसन्द करने लगूँ परन्तु कोई व्यक्ति तलवार की नोक पर बलात् मेरी रुचि को कड़वे पदार्थों की ओर प्रवृत्त नहीं कर सकता।''

''इन विचारों ने मुझे नरम कर दिया। वह अवस्था जो मुझे एक क्षण पूर्व घृणित लगती थी फिर सौ गुणा आकर्षक लुभावनी दिखाई दी। अब तक मैंने उसे निद्रा में डूबा नहीं देखा था। निद्रा की गोदी में उसका सौन्दर्य अधिक पवित्र व सूक्ष्म दिखाई दिया। जैसे वर्षा के उपरान्त पुष्प। इसके अतिरिक्त जागरण में वह सामूहिक आकर्षण नहीं था। दृष्टि कभी नयनों के चुम्बन का आनन्द लेती तो कभी अधरों का रसपान, तो कभी गालों को चूमती। उस निद्रा–लोक में उसके सौन्दर्य का बखान क्या किया जाए। रूप की एक शमा प्रज्वलित थी जिस पर दृष्टि केन्द्रित करने के लिए कोई विशेष बिन्दु नहीं था।''

राजा जी एक क्षमा मिश्रित मुस्कान के साथ पुनः मुँह से प्याले को लगाते हुए बोले, "सरदार साहेब! मेरा प्रतिशोध का जोश ठण्डा पड़ गया है। जिससे प्रेम हो गया उससे घृणा नहीं हो सकती। भले ही हमारे साथ कितनी भी उपेक्षा व बेवफ़ाइयाँ करे। जहाँ प्रेमिका का प्रेमी के द्वारा वध किया जाए वहाँ समझ लीजिए कि नेह नहीं था केवल कामुकता व मौज मस्ती थी।''

''मैं वहाँ से चला आया, परन्तु हृदय को किसी भी प्रकार से चैन नहीं होता। तब से लेकर इस समय तक मैंने आवेश को, क्रोध को नियन्त्रित करने का यथासम्भव प्रयास किया परन्तु विफल रहा। जब तक वह दुष्ट जीवित है मेरे पहलू में एक काँटा सा चुभता रहेगा। मेरे लिए खाना पीना भी वर्जित है। वही काला नाग मेरे कोष तक पहुँचने में बाधक बना बैठा है। वही मेरे व सरफ़राज़ के बीच में दीवार बना हुआ है। वही उस दूध की मक्खी है। उस सर्प का सिर कुचलना ही होगा। उस दीवार को ढहाना ही होगा। इस मक्खी को निकालकर फैंकना ही होगा। जब तक मैं अपनी आँखों से उसकी धज्जियाँ उड़ते हुए न देख लूँगा मेरी आत्मा को कतई शान्ति नहीं होगी। परिणाम की तनिक भी चिन्ता नहीं है। कुछ भी हो परन्तु उसको नरक में पहुँचा कर ही चैन लूँगा। यह कहकर राजा साहेब ने प्रश्नवाचक दृष्टि से देखते हुए कहा, "बतलाइए! आप मेरी क्या सहायता कर सकते हैं?"

मेरे मुख से आश्चर्य से एकदम निकला, 'मैं'!

राजा साहेब ने मुझे प्रोत्साहन देते हुए कहा, "हाँ! आप। आप जानते हैं मैंने इतने व्यक्तियों को छोड़कर आपको क्यों अपनी मनोवेदना में भागीदार बनाया है। आपसे ही क्यों अपने दिल की बात कही है? क्यों आपसे विनती की है? यहाँ ऐसे व्यक्तियों की कमी नहीं जो मेरा संकेत प्राप्त करते ही उस निकृष्ट के धुर्रे उड़ा दें। भरे बाज़ार में उसका रक्तपात करके मौत की नींद सुला दें। जी हाँ! एक ही संकेत पर उसकी हड्डियों का चूरा बनवा सकता हूँ। उसके नाखुनों में कीलें ठुकवा सकता हूँ। परन्तु मैंने सबको छोड़कर आपको चुना है। क्यों? इस कारण से कि मुझे आप पर विश्वास है। ऐसा विश्वास जो मुझे अपने निकटस्थ अधीन व्यक्तियों पर भी नहीं। मैं जानता हूँ कि तुम्हारे सीने में यह भेद उतना ही सुरक्षित रहेगा जितना कि मेरे हृदय में। मुझे विश्वास है कि प्रलोभन अपने पूरे दलबल के साथ भी आपको नहीं डिगा सकता। दानवीय अत्याचार और क्रूर यातनाएँ भी तुम्हारे अधरों को खोल नहीं

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

www.thearyasamaj.org

महर्षि दयानन्द वचनामृत

● आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री (वेदप्रवक्ता)

विश्व के इतिहास में धर्म, राजनीति और समाज सेवा इन तीनों क्षेत्र में अपनी भूमिका निर्वाह करने वाले दुर्लभ महापुरुषों की श्रेणी में महर्षि दयानन्द अग्रगण्य हैं। जिन्होंने वेदोक्त धर्म की सच्ची व निर्भ्रान्त व्याख्या की। अनेक सामाजिक कुरीतियों पर कुठाराघात किया। साथ ही स्वदेशी राज की श्रेष्ठता प्रतिपादित करते हुए स्वतंत्रता का शंखनाद करके विश्व का महान् उपकार किया।

विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न, आदित्य ब्रह्मचारी, महानयोगी, सन्त हृदय दया, करुणा, परोपकार, सरलता, सहिष्णुता के धनी महर्षि दयानन्द महाराज के अनमोल वचनों को पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत करते हैं–

1. जिस देश में यथायोग्य ब्रह्मचर्य विद्या और वेदोक्त धर्म का प्रचार होता है, वही देश सौभाग्यवान् होता है।

2. जब तक इस होम का प्रचार रहा तब तक आर्यावर्त्त देश रोगों से रहित और सुखों से पूरित था अब भी प्रचार हो तो वैसा ही हो जाए।

3. जैसे शीत से आतुर पुरुष का अग्नि के पास जाने से शीत निवृत्त हो जाता है वैसे परमेश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण, कर्म, स्वभाव पवित्र हो जाते हैं।

4. जब तक मनुष्य धार्मिक रहते हैं, तब तक राष्ट्र बढ़ता रहता है। जब दुराचारी हो जाते हैं, तब राज्य नष्ट–भ्रष्ट हो जाता है।

5. जिससे दुःखसागर से पार उतरें कि जो सत्यभाषण, विद्या, सत्संग यमादि योगाभ्यास, पुरुषार्थ, विद्यादानादि शुभ कर्म हैं, उन्हीं को तीर्थ समझता हूँ, इतर जलस्थलादि को नहीं।

6. 'मुक्ति के साधन' ईश्वरोपासना अर्थात् योगाभ्यास, धर्मानुष्ठान ब्रह्मचर्य से विद्याप्राप्ति, आप्त विद्वानों का संग, सत्यविद्या, सुविचार और पुरुषार्थ आदि हैं।

7. परमात्मा की इस सृष्टि में अभिमानी, अन्यायकारी, अविद्वान् लोगों का राज्य बहुत दिन तक नहीं चलता।

8. कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है।

9. परोपकार और परहित करते समय अपना मान, अपमान और पराई निन्दा का परित्याग करना ही पड़ता है। इसके बिना सुधार नहीं हो सकता।

10. जो मनुष्य जगत् का जितना उपकार करेगा, उसको उतना ही ईश्वर की व्यवस्था से सुख प्राप्त होगा।

11. जो अपनी ही स्त्री से प्रसन्न और ऋतुगामी होता है वह गृहस्थ में भी ब्रह्मचारी के सदृश है।

12. सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।

13. जो बलवान होकर निर्बलों की रक्षा करता है वही मनुष्य कहलाता है और जो स्वार्थवश परहानि मात्र करता है वह जानो पशुओं का भी बड़ा भाई है।

14. वस्तुतः जब तीन उत्तम शिक्षक, अर्थात् एक माता, दूसरा पिता और तीसरा आचार्य होवे तभी मनुष्य ज्ञानवान होता है। वह कुल धन्य! वह सन्तान बड़ी भाग्यवान! जिसके माता और पिता धार्मिक विद्वान हों। जितना माता से सन्तानों को उपदेश और उपकार पहुँचता है उतना किसी से नहीं।

15. जो कोई सभा में अन्याय होते हुए देखकर मौन रहे अथवा सत्य, न्याय के विरुद्ध बोले, वह महापापी होता है।

16. एक को स्वतंत्र राज्य का अधिकार न देना चाहिए, किन्तु राजा जो सभापति, तदाधीन सभा, सभाधीन राजा, राजा और सभा प्रजा के आधीन और प्रजा राजसभा के आधीन रहे।

17. जो कोई गृहाश्रम की निन्दा करता है वही निन्दनीय है और जो प्रशंसा करता है वह प्रशंसनीय है।

18. मनुष्य उसी को कहना जो कि मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख – दुःख और हानि–लाभ को समझे! अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा (यदि) निर्बल हो तो उससे भी डरता रहे।

19. मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य का जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़कर असत्य में झुक जाता है।

20. मनुष्य जन्म का होना सत्यासत्य के निर्णय करने–कराने के लिये है न कि वाद–विवाद विरोध करने–कराने के लिए।

फ्लैट नं. सी–1, पूर्ति अपार्टमेंट,
विकासपुरी, नई दिल्ली–18
मो.– 9810084806

हँसकर हिन्दुस्तान हथियाने के सपने देखने वाले अन्दरुनी दुश्मनों से सावधान

● हरिकृष्ण निगम

लगभग 20 से अधिक ग्रन्थों के रचयिता वरिष्ठ लेखक व पत्रकार डॉ. किशोरी लाल व्यास की यह अनूठी कृति है, जिसको वे विद्या के रूप में 'कथा संग्रह' की संज्ञा देते हैं पर इसे कदापि कथा या औपन्यासिक पुस्तक नहीं कही जा सकती है क्योंकि इसमें तथ्य परक अभिलेख घटना क्रमों का उल्लेख है जिसे मात्र आधुनिक इतिहास का कड़वा सच कहा जा सकता है। इसके अतिरिक्त आवरण पृष्ठ के पीछे द्वितीय, तृतीय व अन्तिम मुख पृष्ठ पर उन्होंने देश के जिस भावी परिदृश्य की संरचना, देश विभाजन के बाद के उस तथ्य का भी उल्लेख किया है कि जब जल्दी ही वह दिन देखना पड़ सकता है जब इस्लाम का झंडा लाल किले पर फहरा सकता है, पाकिस्तान से बंगलादेश तक के बीच की भूमि इस्लामी हो सकती है। लेखक वह अंधकारमय भविष्य की संकल्पना भी करते हैं कि जनसांख्यिक परिवर्तनों व खुली राष्ट्रद्रोही सहधर्मियों की गतिविधि व आतंकवाद केरल से हैदराबाद, मैसूर और औरंगाबाद से होकर सारे देश को लील सकता है। मुसलमानों का बहुप्रतीक्षित सर्वत्र शरिया कानून का सपना व उसके द्वारा अनुमोदित बैंकिंग, बीमा, स्टॉक एक्सचेंज, पर्यटन स्थल, शापिंग माल, इस्लामी उपभोक्ता इन्डेक्स, शापिंग के विशेष महिलाओं के लिए उपयुक्त विभाग और सर्वत्र शरीयत समनुकूल नाम पट्ट होंगे। उन्हें बुरक्रोव हिजाब में चाहे वे दूध–पीती बच्चियाँ क्यों न हों सार्वजनिक स्थानों में लाया जाएगा। भारत का संविधान कचरा–कुण्डी में धूल खाएगा और हिन्दुओं का स्वाभिमान मिट्टी में मिल जाएगा।

डॉ. किशोरी लाल व्यास के उपर्युक्त संग्रह को इसकी विविधता और प्रस्तुति के अनेक रूपों के कारण बरबस कोई भी पाठक आकृष्ट हुए बिना नहीं रह सकता है। इसमें 35 से अधिक आलेख व संक्षिप्त टिप्पणियाँ, सामाजिक मुद्दों पर चुभती हुई लगभग 20 कविताएँ व जिन विषयों पर पृथक् सूचनापरक बाक्स में दिए आंकड़े हैं वे स्वतः अपना मन्तव्य स्पष्ट करते हैं जैसे–भारत में मदरसों का जाल, आतंकवाद बेरोजगारी का परिणाम नहीं मृत्यु का कल्ट है, इस्लामी जनसांख्यिकी टाइम बम की टिक–टिक सुनिए, "ऐ अल्लाह कीम अल काफिरान का नाश कर!" आनुपातिक दृष्टि से देश में सृजित अपराध करने वाले मुसलमान ही क्यों हैं?

क्योंकि हिन्दी साहित्य और पत्रकारिता जगत् में डॉ. व्यास की सन् 2004 में लिखी कालजयी कृति 'रजाकार' हैदराबाद के मुक्ति संग्राम पर लिखा ग्रंथ आज भी अपने समय का विश्वसनीय दस्तावेज माना जाता है जिसमें आर्यसमाज की भूमिका के साथ–साथ सातवें और अन्तिम शासक उस्मान अलीखान (1911–1954) के षडयंत्रों का विस्तृत व प्रामाणिक उल्लेख है, इसलिए उनके प्रस्तुत ग्रंथ का भी महत्त्व बढ़ जाता है। यह सर्वविदित है कि डॉ. व्यास का परिवार मुस्लिम अत्याचारों व उत्पीड़न का शिकार रहा था। उनका घर एक तूफान में उजड़ा था जब उनके माता–पिता, चाचा–चाची को निज़ामाबाद से भाग कर व बार्शी में शरण लेनी पड़ी थी। उथल–पुथल के बाद लौटकर फिर उन्हें नई जिन्दगी शुरु करनी पड़ी थी। फिर भी या सदियों का सिलसिला उनका पीछा करता रहा था। वे स्वातंत्र्योत्तर कई सरकारों की तुष्टीकरण की ढुलमुल नीति, आतंकवादी विचारधारा के पोषण की आदत पाले मीडिया , अराजकता व अलगाववादियों को प्रश्रय देने वाले सेकुलर सहकर्मियों की आलोचना करने में यावज्जीवन नहीं हिचके।

लेखक ने स्पष्ट लिखा है कि जिन मुसलमानों ने खुलकर संघर्ष कर पाकिस्तान हासिल किया उन्हें इस बात का कोई भी अधिकार नहीं है कि वे देश के बहुसंख्यकों को अपमानित करें। जिन मन्दिरों को मुसलमानों ने कई सदियों तक तोड़ा, हमारे पूर्वजों के आराध्यों की प्रतिमाओं को हर शहर में जुम्मा मस्जिद कहलाने वाली सार्वजनिक प्रवेश सीढ़ियों पर खण्डित कर जड़ा वे यदि एक भी आस्थावान् हिन्दू को याद है तो उन्हें मुसलमानों को राम मन्दिर, कृष्ण मन्दिरों, महाकाल आदि के पवित्र मन्दिरों की याद दिलाकर उनके विशेषाधिकारों, विशेष सुविधाओं और लम्बित कोर्ट केसों को वापस लेने के लिए बाध्य करना चाहिए। यही मानवता और सद्भावना का तकाजा है। 'माईनारिटी राईट्स' की धोखाधड़ी वस्तुतः हिन्दुओं के मूल मानवाधिकारों का उल्लंघन है। डॉ. व्यास को वह भय सामने सिर उठाता दीखता है जब सारे देश में चाँद–सितारों के परचम लहरायेंगे, ज्ञान–विज्ञान, ललित कलाएँ समाप्त हो जाएगी व मदरसों व मस्जिदों के मकड़जाल से धार्मिक शिक्षा सरकारी पाठ्यक्रमों में समाविष्ट कर दी जायेगी। लेखक की भविष्यवाणी है कि वह दिन सिर्फ आधी शताब्दी से भी कम समय में आ जाएगा।

उपर्युक्त ग्रंथ का सर्वाधिक महत्त्व तीसरे अवरण पृष्ठ पर प्रकाशित संक्षिप्त लेख अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। पुनर्निर्माण! प्रत्येक राष्ट्रवादी व स्वाभिमानी हिन्दू के लिए यह महत्त्वपूर्ण ग्रंथ संग्रहणीय भी है और निस्संदेह आज के दुष्प्रचारित राजनीतिक विषवयन के खिलाफ समुचित प्रत्युत्तर भी कहा जा सकता है।

ए–1802 पंचशील हाईट्स
महावीर नगर, कादिवली (प), महावीर नगर
मुम्बई–400061 मो. 9820215464

www.thearyasamaj.org

महात्मा नारायण स्वामी रचित उपनिषद् रहस्य

भारतीय मनीषा का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण उपनिषद् हैं। ये आध्यात्मिक चिन्तन के सर्वोत्कृष्ट नवनीत हैं। प्रायः कहा जाने लगा है कि वेदों में मात्रा कर्मकाण्ड का विवेचन है जबकि सर्वोच्च दार्शनिक ज्ञान की चर्चा उपनिषदों में ही मिलती है। यह धारणा भी एकांगी है। वस्तुतः वेदों (मन्त्र संहिताएँ ही वेद हैं) में सर्व विद्याएँ मूल रूप में उपस्थित हैं, इसलिए स्वामी दयानन्द सरस्वती ने उन्हें 'सब सत्य–विद्याओं की पुस्तक' बताया है। वेदों में जहाँ आध्यात्मिक तत्त्वज्ञान है वहाँ लौकिक–सांसारिक विद्याओं की भी मूल रूप में विवेचना हुई है। इसी कारण मुण्डकोपनिषद् में जहाँ परा और अपरा विद्याओं का प्रसंग आया वहाँ ऋग्वेदादि को अपरा (सर्व विद्याओं का मूल होने से) कहा और परा विद्या के उल्लेख में किसी ग्रन्थ विशेष का नाम न लेकर इतना ही कहा–अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते। (1/5) परा विद्या वह है जिससे उस अक्षर–अविनाशी ब्रह्म का ज्ञान होता है।

उपनिषदों का महत्त्व दार्शनिक जगत् में सर्वत्रा मान्य किया गया है। वेदान्त–शास्त्रियों ने तो इन्हें प्रस्थानत्रायी में (उपनिषद्, ब्रह्मसूत्रा और गीता) प्रथम स्थान दिया है और लगभग सभी वेदान्त–सम्प्रदाय प्रवर्तकों ने अपने–अपने दृष्टिकोणों से इन पर भाष्य लिखे हैं। अन्य प्राचीन एवं नवीन विद्वानों ने भी उपनिषदों पर अपनी कलम चलाई है। स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के प्रथम संस्करण (जो अब सर्वसुलभ नहीं है) में उपनिषदों के वाक्यों को भूरिशः उघृत किया है। उनके पश्चात् आर्य विद्वानों का एक बड़ा समूह रहा है जिसने इन ग्रन्थों पर भाष्य लिख कर इन्हें सर्वसुलभ बनाया तथा जन–जन तक ऋषियों की ब्रह्म विद्या का प्रचार किया। ऐसे विद्वानों में स्वामी दयानन्द के आद्य शिष्य पं. भीमसेन शर्मा (जो बाद में सनातनी खेमे में चले गए), महामहोपाध्याय पं. आर्य मुनि, पं. राजाराम, स्वामी दर्शनानन्द, पं. बद्रीदत्त शर्मा आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। महात्मा नारायण स्वामी के परवर्ती उपनिषद् व्याख्याकारों में स्वामी ब्रह्ममुनि तथा पं. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार के नाम महत्त्व के हैं। गत शताब्दी के तीसरे दशक में महात्माजी ने अनेक स्थानों पर उपनिषदों की सरल, सुबोध तथा रोचक कथाएं प्रस्तुत कीं, तो लोगों का उनसे आग्रह रहा कि वे इन्हीं कथाओं को पुस्तक का रूप दे दें ताकि इस 'उपनिषद् रहस्य' को सभी पाठक पढ़ सकें। अपने श्रोताओं के इसी अनुरोध के कारण महात्माजी ने 'उपनिषद् रहस्य' के सामान्य शीर्षक से ईश से आरम्भ कर तैत्तिरीयोपनिषद् पर्यन्त आठ उपनिषदों का विशद भाष्य लिखा। तदनन्तर छान्दोग्य 1939 (1996 वि.) तथा बृहदारण्यक 1948 (2005 वि.) इन दो बड़े उपनिषदों पर भी भाष्य लिखे। उपनिषदों में आई कथाओं और व्याख्याओं का सरल भाषान्तर उन्होंने 'उपनिषद् कथा माला' के नाम से किया।

महात्मा जी ने उपनिषद् रहस्य के प्रकाशनाधिकार सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को इसी कारण से सौंपे थे कि यह सभा आगे भी इनको निरन्तर छापती रहेगी, किन्तु कतिपय संस्करण छापने के बाद सभा ने इसमें शिथिलता दिखाई। प्रत्येक उपनिषद् का भाष्य लिखने के पूर्व लिखे उपोद्घात में विद्वान् भाष्यकार ने आलोच्य उपनिषद् के कथ्य–प्रतिपाद्य के महत्त्व का निरूपण किया। प्रथम ईशोपनिषद् स्वल्प परिवर्तन के साथ यजुर्वेद का चालीसवाँ अध्याय ही है। प्रचलित उपनिषद्, यजुर्वेद की काण्व शाखा का अन्तिम अध्याय है। वस्तुतः यह उपनिषद् ही ईश्वरोक्त है, अन्य तो भिन्न–भिन्न ऋषियों द्वारा लिखे गए हैं जो विभिन्न ब्राह्मण ग्रन्थों या आरण्यकों से पृथक् संकलित किए गए हैं।

ईशोपनिषद् के अट्ठारह मन्त्रों को महात्माजी ने चार भागों में विभाजित किया है। उनकी दृष्टि में प्रथम तीन मन्त्रों में पाँच कर्तव्य बताए गए हैं। ये हैं–(1) ईश्वर को सर्वत्रा विद्यमान मानना (2) सांसारिक वस्तुओं का त्यागपूर्वक भोग करना (3) अन्यों के धन को न लेना (4) फलाकांक्षा रहित नित्य कर्तव्य कर्म करना (5) अन्तरात्मा के विपरीत आचरण न करना। चौथे से आठवें मन्त्र तक ब्रह्म विद्या का उदात्त वर्णन मिलता है। वह अद्वितीय, अगोचर ब्रह्म कैसा है, यह बताना इन पाँच मन्त्रों का उद्देश्य है। विद्या–अविद्या तथा संभूति–असंभूति विचार इस ग्रन्थ का तीसरा भाग है जिसमें मनुष्य क्या करे जिससे कि उसे अमरत्व की प्राप्ति हो, यह बताया गया है। अन्तिम दो मन्त्रों में सत्राहवाँ मनुष्य जीवन के अन्त समय में ओम् का स्मरण करने का विधान करता है और अन्तिम अट्ठारहवाँ मन्त्र–'अग्ने नय सुपथा' प्रार्थनापरक है। भाष्यकार ने उपोद्घात में लिखा है कि ईशोपनिषद् पर उन्होंने 41 टीकाएँ पढ़ी हैं। इसकी आद्य टीका शंकराचार्य कृत है जो अद्वैत सिद्धि के प्रयोजन से लिखी गई है। उपनिषद् रहस्य को आरम्भ में आचार्य धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री (गुरुकुल वृन्दावन के आद्य स्नातक) ने अपने पत्रा 'प्रभात' में धारावाहिक प्रकाशित किया था।

केनोपनिषद् तलवकार शाखा का ग्रन्थ है। इसका भाष्य 1929 में नारायण आश्रम रामगढ़ (नैनीताल) में लिखा गया। महात्माजी के अनुसार आकार में लघु होने पर भी यह ब्रह्म विवेचन की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। उपनिषदों की वेद–मूलकता का उदाहरण देते हुए महात्माजी ने ठीक लिखा है कि यह उपनिषद् यजुर्वेद (40/4) की इस उक्ति–'नैनद्देवा–आप्तुवन'–का ही विस्तार है क्योंकि आख्यायिका का सहारा लेकर उपनिषद् प्रणेता यही सिद्ध करते हैं कि परमात्मा को अग्नि, वायु और जल जैसे भौतिक देव नहीं जान सकते। कठोपनिषद् भाष्य की रचना 1932 में हुई। इसे सार्वदेशिक सभा के कार्यालय बलिदान भवन (दिल्ली) में लेखक ने पूरा किया। महात्माजी की दृष्टि में यजुर्वेदीय काठक शाखा का यह ग्रन्थ श्रेष्ठ और मनोरंजक है। क्या तो विषय विवेचन और क्या अभिव्यक्ति और वह भी काव्यात्मक, सभी दृष्टियों से कठोपनिषद् एक उत्कृष्ट कृति है और महात्मा नारायण स्वामी की टीका भी उतनी ही सरस तथा मनोज्ञ है। अथर्ववेदीय प्रश्नोपनिषद् का भाष्य महात्माजी ने 1934 में लिखा। प्रश्नोत्तरों के माध्यम से गुरु–शिष्य संवाद शैली में लिखा गया यह ग्रन्थ अध्यात्म विषयक छह प्रश्नों के उत्तर प्रस्तुत करता है।

परमात्म तत्त्व के गूढ़ किन्तु सारगर्भित विवेचन की दृष्टि से मुण्डकोपनिषद् का महत्त्व कम नहीं है। इसकी टीका महात्माजी ने स्वस्थापित नारायण आश्रम (रामगढ़) में 1935 में लिखी। इसमें परा–अपरा के विवेचन में जहाँ लेखक ने अपने सूक्ष्म चिन्तन का सहारा लिया है वहाँ प्रथम कर्मकाण्ड की प्रशंसा तथा बाद में यज्ञ कर्मों को कमजोर नौका के तुल्य बता कर उसकी आलोचना में प्रत्यक्षता दिखाई पड़ने वाले विरोध का सन्तोषप्रद समाधान भाष्यकार के विवेचन कौशल का परिचायक है। माण्डूक्योपनिषद् आकार में लघु (केवल 12 मन्त्र) है किन्तु ओम् की सर्वांगीण व्याख्या का ग्रन्थ होने के कारण उतना ही महत्त्व का भी है। इस उपनिषद् की गूढ़ता का स्पष्टीकरण नारायणीय टीका से भली–भांति हो जाता है।

ऐतरेयोपनिषद् भाष्य की रचना 1938 में रामगढ़ में हुई। ऐतरेय ऋषि प्रणीत यह लघु रचना ऐतरेयारण्यक का भाग है। नाना रहस्यों से युक्त यह ग्रन्थ अल्पकाय होने पर भी किंचित् दुरुहता लिये है जिसे टीका के सहारे सरलतापूर्वक समझा जा सकता है। यजुर्वेद की तैत्तिरीय शाखा से सम्बन्धित तैत्तिरीयोपनिषद् का भाष्य 1938 में नारायण आश्रम में लिखा गया। शिक्षावल्ली, ब्रह्मानन्द वल्ली तथा भृगुवल्ली शीर्षकों में विभक्त यह उपनिषद् वस्तुतः तैत्तिरीय आरण्यक के 7, 8, और 9 प्रपाठक का ही रूप है। विषय वैविध्य तथा रोचक शैली इस ग्रन्थ की विशेषता है। आरम्भ का मंगल पाठ (ओम् शन्नो मित्रः आदि) को स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के आरम्भ में यथावत् रखा है। पञ्च कोश विचार तथा आचार्य का दीक्षान्त अनुशासन इस उपनिषद् के उदात्त अंश हैं। छान्दोग्य तथा बृहदारण्यक के भाष्य भी इन ग्रन्थों की विषय वस्तु को सुबोध बनाते हैं।

☞ पृष्ठ 06 का शेष

आपका चित्र...

सकतीं। तुम धोखा नहीं दोगे। द्रोह नहीं करोगे। इस अवसर से अनुचित लाभ नहीं उठाओगे।

''जानते हो इसका पुरस्कार क्या होगा? इसके बारे में तुम निश्चिन्त रहो। मुझमें और कितने भी दोष क्यों न हों, उपकार को विसार देने का दोष मुझ में नहीं है। बड़े से बड़ा पुरस्कार जो मेरे बस में है, वह तुम्हारे पैरों पर धर दिया जाएगा। पद, प्रतिष्ठा, जागीर, धन सम्पदा, सम्मान तुम्हारी इच्छा के अनुसार प्रदान किए जाएँगे। तुम ही उसमें सर्व सर्वा–सर्वतन्त्र स्वतन्त्र होगे। कोई हस्तक्षेप नहीं करेगा। कामनाओं व अरमानों को असीम उड़ान भरने की स्वतन्तत्रा होगी। एक बार फिर से प्रोत्साहन देने व सम्मानित करने की प्राचीन कहानियों की पुनरावृत्ति होगी। तुम स्वयं आदेश लिखोगे और मैं उन पर हस्ताक्षर करूँगा। बोलो कब चलना चाहते हो? उसका नाम व पता इस कागज पर लिखा हुआ है। इसे अपने मस्तिष्क में अंकित कर लो। कागज को फाड़ डालो। मैंने कितना बड़ा दायित्व तुम्हारे कंधों पर डाला है। मेरी जान तुम्हारी मुट्ठी में है। तुम इसे बना और बिगाड़ सकते हो। मुझे विश्वास है कि तुम इस कार्य को बहुत कुशलता से सिरे चढ़ा दोगे। अत्यन्त सूझबूझ, अत्यन्त दूरदर्शिता व अत्यधिक सावधानी से काम करना होगा। थोड़ी सी असावधानी से कहा गया एक शब्द, एक क्षण का विलम्ब–मेरे व तुम्हारे दोनों के लिए एक घातक विष होगा। शत्रु घात लगाए हुए बैठा है। जो पाप किया ही नहीं उसके लिए गद्दी से च्युत करने की योजनाएँ सोची जा रही हैं। पाप करने पर क्या दण्ड दिया जाएगा इसका अनुमान तुम लगा सकते हो। मैं किसी दूरस्थ पर्वतीय क्षेत्र में बन्द कर दिया जाऊँगा। रियासत परायों के अधिकार में चली जाएगी। मेरा जीवन विनष्ट हो जाएगा। तो तुम कब जाओगे? यह इम्पीरियल बैंक की चैक बुक है। मैंने चैकों पर हस्ताक्षर कर दिए हैं। जब और जितने भी रुपयों की आवश्यकता हो, ले लेना।''

www.thearyasamaj.org

☞ पृष्ठ 02 का शेष

आनन्द गायत्री कथा

राजा ने कहा– 'कष्ट के समय तुमने मेरी सहायता की। यदि तुमको कभी आवश्यकता पड़े तो मेरे समीप आना! मैं तुम्हारी सहायता करूँगा।' लकड़हारे ने हाथ जोड़कर प्रणाम कर दिया। राजा चले गए। कुछ दिन व्यतीत हो गए। धीरे–धीरे उस वन में सभी वृक्ष समाप्त हो गए जिसमें लकड़हारा लकड़ी काटकर कोयले बनाकर बेचता था। अब वह अपनी जीविका चलाए तो कैसे? लाए तो कहाँ से? बहुत दुःखी हो गया। दुःखित चित्त से राजा के समीप पहुँचा। सेवकों ने राजा को सूचना दी कि लकड़हारा आपसे मिलना चाहता है। राजा ने सोचा, स्मरण आया कि हाँ, एक लकड़हारे को सहायता देने का वचन दिया था। एक दिन उसने प्राण बचाए थे। बोला– 'उसको अच्छे–अच्छे कपड़े पहनाकर मेरे समीप लाओ!' सेवकों ने लकड़हारे को स्नान कराया, नवीन वस्त्र पहनाए। राजा के सामने ले आए। राजा ने पूछा– 'कहो भाई लकड़हारे! क्या बात है? उदास क्यों हो?' लकड़हारे ने उत्तर दिया– 'महाराज, जिस वन में से मैं लकड़ियाँ काटता था, समाप्त हो गया। अब जीविका का मेरे पास कोई साधन नहीं। आपकी शरण में आया हूँ कि कोई और वन मिले तो मैं भूखा मरने से बच जाऊँ।' राजा ने कहा–'हो जाएगा यह काम, तुम निश्चिन्त हो जाओ!' उसके चले जाने पर अपने मन्त्रियों को बुलाकर परामर्श किया कि लकड़हारे को क्या दिया जाए? परामर्श के पश्चात् निर्णय हुआ कि शहर के दक्षिण में राजा का चन्दन के वृक्षों का जो वन है, वह लकड़हारे को दिया जाए जिससे सदा के लिए लकड़हारे की निर्धनता दूर हो जाए। पदाधिकारियों को बुलाया गया। चन्दन के वृक्षों का वह वन लकड़हारे के नाम कर दिया। उसको सूचना दे दी गई। कई वर्ष व्यतीत हो गए। राजा एक दिन अपने महल में बैठे थे कि लकड़हारे का ध्यान आया। प्रसन्नता के साथ उन्होंने सोचा– अब तो लकड़हारा बहुत धनी हो गया होगा। कई भवन तथा महल बना लिए होंगे, इसलिए चलकर उसे देखना चाहिए। अपने मन्त्रियों को साथ लेकर वह उस वन में गया, जो लकड़हारे को दिया था। किन्तु वहाँ कोई वन ही नहीं था; न चन्दन का कोई वृक्ष। राजा ने घबराकर पूछा– 'अरे, वह वन कहाँ है जो लकड़हारे को दिया था? किसी और स्थान पर होगा, तुम मुझे अन्य स्थान पर ले आए हो।' मन्त्रियों ने, जों पदाधिकारियों ने कागज़ों की छानबीन की और बोले– 'महाराज! वह जंगल तो इसी स्थान पर था।' राजा ने कहा– 'फिर वह गया कहाँ? खोज करने पर कुछ दूरी पर चन्दन के कुछ वृक्ष दिखाई दिए। उनके पीछे बैठा हुआ लकड़हारा दिखाई दिया– निराश और उदास, विचारमग्न। राजा ने उसके पास जाकर पूछा– 'अरे, तू चिन्ता में क्यों है?' लकड़हारे ने प्रणाम करके कहा– अन्नदाता! आपकी कृपा से इतने वर्ष तो कट गए। अब कुछेक पेड़ रह गए हैं, जो थोड़े दिनों में समाप्त हो जाएँगे। सोचता हूँ इसके पश्चात क्या करूँगा?' राजा ने आश्चर्यपूर्वक कहा– 'वृक्ष तो थोड़े से रह गए हैं, शेष वृक्षों का क्या किया तूने?' लकड़हारा बोला– 'नित्य लकड़ी काटता हूँ, कोयले बनाता हूँ और बाज़ार में जाकर बेच देता हूँ। राजा ने दुःख से कहा– 'अरे भाग्यहीन। यह तूने क्या किया?' यह चन्दन की लकड़ी थी। जलाकर कोयला क्यों बना दिया?'लकड़हारा बोला– 'चन्दन की लकड़ी क्या होती है?' राजा बोला– 'अच्छा होता यदि तू जानता। अभी एक लकड़ी काट कर मेरे सामने कोई दो–फुट की, और ले जा इसको बाज़ार में। कोयला न बनाना इसका।' लकड़हारे ने वैसा ही किया। एक दुकानदार ने देखा– लकड़ी है असली चन्दन की, लकड़हारा है गँवार; बोला– क्या लेगा इसका?' लकड़हारे ने पूछा– 'तुम क्या दोगे? दुकानदार ने कहा–'एक रुपया!' लकड़हारा आश्चर्य से चिल्लाकर बोला!' उसका तात्पर्य था कि इस छोटी सी लकड़ी का एक रुपया! दुकानदार समझा, यह जानता है; बोला– 'दो रुपये।' लकड़हारा और भी आश्चर्य में चिल्लाकर बोला– 'दो रुपये!' दुकानदार ने घबराकर कहा– 'अच्छा चार रुपये।' लकड़हारा चिल्लाया– 'अच्छा, चार?' कुछ दूरी पर एक और दुकानदार खड़ा था। उसने देखा कि पहला दुकानदार एक मूल्यवान् वस्तु को कौड़ियों के भाव खरीद रहा है। उसे पुकारकर कहा– 'अरे इधर आ! मैं दस रुपये दूँगा।' लकड़हारे ने जब दस का नाम सुना तो सिर पकड़कर बैठ गया। चिल्ला उठा, धाड़ मारकर रोने लगा। अब उसे ज्ञात हुआ कि जिस लकड़ी को वह कोयला बनाकर बेचता रहा है वह कितनी मूल्यवान् थी! कितनी बड़ी सम्पत्ति का उसने विनाश कर दिया।

उस लकड़हारे की दशा पर, उसकी मूर्खता पर आपको करुणा आती है। किन्तु सुनो मेरे भाई! हम स्वयं भी तो उस लकड़हारे की भाँति हैं। राजाओं के राजा उस परमात्मा ने न जाने किस बात से प्रसन्न होकर साँसों का यह चन्दन से पूर्ण वन हमें दिया था। हमने इसे कुत्सित वासनाओं, घृणा, पाप की अग्नि से जलाकर भस्मसात् कर दिया। कितनी मूल्यवान् हैं ये साँस, यह हमने समझा नहीं। अरे सुनो! जब महारानी विक्टोरिया का अन्तिम समय आया, जब बचने की आशा न रही, तो बड़े–बड़े डॉक्टर बुलाए गए। घोषणा की गई कि महारानी को एक मिनट के लिए भी जीवित रखो तो एक लाख पौंड मिलेगा; किन्तु कोई एक मिनट भी जीवित न रख सका। कितना मूल्यवान है साँसों का यह चन्दन वृक्षों से पूर्ण यह वन, जिसे हमने काम, क्रोध, लोभ, मोह, और अहंकार की आग में जलाकर कोयला बना दिया। परन्तु जो होना था सो हो गया, अब रह गए चन्दन के थोड़े–से वृक्ष; थोड़े से वर्ष रह गए हैं इस जीवन के, शायद थोड़े से महीने। आओ, इन्हीं का ठीक–ठाक उपयोग करें। यत्न करो तुम्हारा लोक और परलोक सुधर जाए। लोक और परलोक सुधारने के दो साधन हैं– यज्ञ और गायत्री। गायत्री क्या है? अवश्य ही आप गायत्री मन्त्र को जानते हैं। वह आर्य और हिन्दू की क्या जो गायत्री मन्त्र से परिचित न हो? यह मन्त्र हमारी सबसे बड़ी सम्पत्ति है। इसमें हमारी संस्कृति, सारी सभ्यता, समस्त सम्पत्ति, समस्त कर्म निहित हैं। इसमें ईश्वर की प्रस्तुति है, उपासना है, प्रार्थना है। इसलिए हमारे पूर्वजों ने, ऋषियों ने, महात्माओं ने, योगियों ने और हमारे ग्रन्थों ने इसे गुरुमन्त्र का नाम दिया है। किन्तु क्या है यह मन्त्र?

क्रमशः....

☞ पृष्ठ 05 का शेष

भारत के गौरवशाली...

काम करती थी। राणा सांगा का जब देहान्त हो गया, उस समय उसका पुत्र उदय सिंह छोटा बच्चा था, इसलिए राज्य का मन्त्री बलबीर सिंह राज्य का काम सम्भालता था। मन्त्री के मन में पाप आ गया कि यदि उदय सिंह को मार दिया जाए तो राज्य का स्वामी मैं बन सकता हूँ। यह सोच कर मन्त्री उदय सिंह को मारने की सोचने लगा। पन्ना धाय को यह ज्ञात हो गया कि मन्त्री, उदय सिंह को मारना चाहता है। जिस दिन उदय सिंह को मारने के लिए मन्त्री बलबीर सिंह के आने की बात थी, उस दिन पन्ना ने उदय सिंह के पालने में अपने बच्चे को सुला दिया और उदय सिंह को कहीं छिपाकर रख दिया। जब मन्त्री तलवार लेकर आया और पन्ना से पूछा कि उदय सिंह कहाँ है, तब पन्ना ने पालने की तरफ इशारा कर दिया और मन्त्री ने उस बच्चे को मार दिया जो पालने मे सो रहा था यानि उदय सिंह को बचाने के लिए पन्ना धाय ने अपने बच्चे का बलिदान कर दिया। इस कर्त्तव्य को किन अक्षरों मे लिखें, वे अक्षर मिलने भी दुर्लभ हैं। धन्य है! पन्ना धाय जिसने उदय सिंह को बचा कर भारत के इतिहास को सुरक्षित रखा। यदि उस दिन उदय सिंह मारा जाता तो महाराणा प्रताप कहाँ से होता और देश का गौरव कैसे बचा रहता?

12. महर्षि दयानन्द के जीवन में एक घटना आती है कि किसी मुस्लिम भाई ने महर्षि को पान में जहर दे दिया। पता लगने पर स्वामी जी ने योग साधना से जहर निकाल दिया और स्वस्थ हो गए। महर्षि जी का एक मुसलमान तहसीलदार शिष्य था, उसने उस जहर देने वाले व्यक्ति को पकड़ लिया और स्वामी जी से पुरस्कार पाने के लिए उसको स्वामी जी के पास लाकर बोला कि स्वामी जी यह व्यक्ति है जिसने आपको पान में जहर दिया था। आप कहो तो इसे जेल में डाल दूँ। तब स्वामी जी ने कहा कि मैं किसी को जेल में डालने के लिए नहीं आया बल्कि जेल से छुड़ाने के लिए आया हूँ। स्वामी जी की इस क्षमा वृत्ति को देखकर तहसीलदार हक्का–बक्का रह गया। वास्तव में स्वामी जी मानव–मात्र को अज्ञान, अन्धविश्वास, पाखण्ड व अनेक किस्म की बुराईयों रूपी जेल से छुडाने के लिए ही आए थे, जिन से काफी सीमा तक लोगों को मुक्ति भी मिली।

13. लाल बहादुर शास्त्री एक सच्चे ईमानदार, त्यागी, तपस्वी, कर्तव्य पारायण, परिश्रमी व सरल–सादे स्वभाव के व्यक्ति थे। भ्रष्टाचार से बहुत दूर रहने वाले व्यक्ति थे। वे भारत के प्रधानमन्त्री बनने के बाद भी एक साधारण छप्पर के घर में रहते थे और साधारण कपड़े पहनते थे। जब कभी उनको ठण्डे देशों में जाना होता था तो उन्हीं सादे कपडों में चले जाते थे। उन्हीं के प्रधानमन्त्री काल में ही पाकिस्तान से युद्ध करना पड़ा और कम साधन होते हुए भी विजय प्राप्त की। यह उनकी सच्चाई और देशभक्ति का ही परिणाम था। एक ऐसे सच्चे, ईमानदार, कर्तव्यनिष्ठ प्रधानमन्त्री की आत्मा को मैं विनम्र भाव से नमन करता हूँ।

14. रानी हाडी की वीरता का उदाहरण भारत का ही नहीं किसी विश्व के इतिहास में भी मिलना मुश्किल है। रानी हाडी का विवाह राजस्थान के किसी राजकुमार से हुआ था। संयोग से विवाह के प्रथम दिन ही किसी शत्रु ने राज्य पर चढ़ाई कर दी। राजकुमार को युद्धभूमि में जाना पड़ा। परन्तु उसका मन रानी हाडी में ही बसा हुआ था। वह युद्ध में जाते समय बार–बार राज महल की तरफ देख रहा था। रानी हाडी भी उसको देख रही थी और उसकी कमजोरी को भाँप गई। अन्त में राजकुमार ने एक सैनिक को रानी के पास भेजकर कोई निशानी मंगवाई जिसको देखकर वह युद्ध करता रहे। सैनिक ने आकर रानी से कोई निशानी माँगी तो रानी ने अपना सिर काटकर एक थाली में रखकर सैनिक को दे दिया। राजकुमार ने जब रानी का शीश देखा तो उसे भी अपने कर्तव्य का बोध हो गया और शीश की माला बनाकर, गले में पहनकर इतनी वीरता से लड़ा कि उसकी विजय हो गई। इस विजय का कारण रानी हाड़ी का बलिदान था, जिसका हम सब भारतीयों को सम्मान करना चाहिए।

गोविन्दराय आर्य एण्ड सन्स
180 महात्मा गांधी रोड (दोतल्ला) कलकत्ता–700007
फोन. न. 22183825(033)
मो. 9830135794

www.thearyasamaj.org

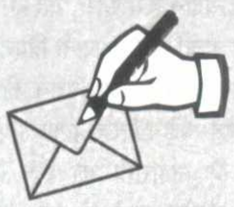

पत्र/कविता

युग नायक महर्षि दयानन्द सरस्वती

युगनायक ऋषि दयानन्द की शिक्षाओं को मानो।
करो वेद प्रचार जगत् में, भारत के विद्वानो।।
जगत् गुरु ऋषि दयानन्द थे, ईश्वर भक्त निराले।
वेदों के विद्वान धुरन्धर, देशभक्त मतवाले।।
बाल ब्रह्मचारी, तपधारी, सत अजब थे त्यागी।
शीलवन्त गुणवान दयामय थे अद्भुत वैरागी।।
जीव मात्र के हित चिंतक को ठीक तरह तुम जानो।
करो वेद प्रचार जगत् में, भारत के विद्वानो।। 1।।
वेद ज्ञान को भूल गई थी, बिलकुल दुनियाँ सारी।
अंधकार में भटक रहे थे, दुनियाँ के नर–नारी।।
चेतन की पूजा तज दी थी, जड़ पूजा थी जारी।
लाखों गऊएँ रोजाना, जग में जाती थीं मारी।।
पढ़ो सभी इतिहास पुराना, गलत ठान मत ठानो।
करो वेद प्रचार जगत् में, भारत के विद्वानो।। 2।।
देव पुरुष ने कृपा की थी, सारे जग पर भारी।
कर्म प्रधान बताया ऋषि ने, समझाए नर–नारी।।
दुर्गुण त्यागो, सद्गुण धारो, बनकर परोपकारी।
छूआछूत की, ऊँच–नीच की दूर करो बीमारी।।
ऋषि ने गौ को मात बताया, ऋषि की शिक्षा मानो।
करो वेद प्रचार जगत् में, भारत के विद्वानो।। 3।।
भारत था परतंत्र, जुलम करते थे गोरे भारी।
उनके जुलमों से आतंकित, थी तब जनता सारी।।
स्वामी जी ने आजादी का, अनुपम पाठ पढ़ाया।
अंग्रेज़ों को मार भगाओ, वैदिक मार्ग बताया।।
धीर–वीर निर्भीक गुरु की, महानता पहचानो।
करो वेद प्रचार जगत् में, भारत के विद्वानो।। 4।।
याद रखो, यदि देव दयानन्द अगर न जगमें आते।
ऋषियों के वंशज दुनियाँ में, ढूँढे से न पाते।।
राम कृष्ण के भक्त आर्यजन, दर–दर धक्के खाते।
वेद शास्त्र रामायण गीता, के पाठक मिट जाते।।
"नन्दलाल" ऋषि दयानन्द के गुण गाओ मर्दानों।
करो वेद प्रचार जगत् में, भारत के विद्वानो।। 5।।

पं. नन्दलाल निर्भय पत्रकार भजनोपदेशक
आर्यसदन–बहीन, जनपद–पलवल (हरियाणा)
चलभाष क्रं– 9813845774

रियांग जाति के वनवासी रो रहे थे

अनेक नगरों में, ईसा मसीह के जन्म दिवस की, खुशियाँ मनाई गई, वहीं रियांग जाति के वनवासी हिन्दू रो रहे थे। क्यों?:–

हिन्दू विरोधी संविधान में, अति उदारवादी नेहरू ने, ईसाईयों तथा मुस्लिमों को भी धर्म प्रचार तथा धर्म परिवर्तन कराने का अधिकार दे दिया। उत्साहित होकर ईसाईयों ने विदेशों से अपार धनराशि मंगाकर असम के पहाड़ी क्षेत्रों, जंगलों, वनवासियों में सेवा की आड़ में, धर्म प्रचार करके, भोले भाले–अशिक्षित–गरीबों को गोरक्षक की जगह गोभक्षक बना दिया। ईसाई बनकर वे राष्ट्र द्रोही हो गए। गाय का मांस खाने लगे। संगठित होकर पुलिस–सेना से लड़ने लगे। सामान्य जीवन अस्त–व्यस्त रहने लगा। अलग देश की मांग करने लगे। मजबूरी में नेहरू को नागालैण्ड, इंदिरा गांधी को मेघालय, राजीव गांधी को मिज़ोरम बनाना पड़ा। इसके लिये असम को तीन बार विभाजित करना पड़ा।

तीनों ईसाई बहुल राज्यों में ईसाई 85–90 प्रतिशत हैं। हिन्दू दबकर घबराकर रह रहे हैं क्योंकि राज्यों सरकारों पर उग्रवादी ईसाई हावी रहते हैं। मिज़ोरम में रियांग जाति के आदिवासी 10 प्रतिशत हैं/थे। इन्होंने धर्म नहीं बदला। ये सच्चे राष्ट्रवादी हैं। इनका ध्यान रखा जाना चाहिए। ईसाई पादरी–उग्रवादी ईसाई संगठन, हिन्दू रियांगो से, दुर्व्यवहार–अत्याचार–अमानवीय कृत्य करने लगे जिससे तंग होकर अक्टूबर 1997 को इन्हें पलायन करना पड़ा। केन्द्रीय सरकार ने, त्रिपुरा के जंगलों में, शिविर लगा दिये थे जहां ये 5000 की संख्या में, 1997 से नारकीय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने मिज़ोरम सरकार को निर्देश दिए हैं कि वह रियांगो का सुरक्षित रूप पुनर्वास करे। उग्रवादी ईसाई संगठन, विभिन्न तरह की बाधाएं–रूकावटें डालकर इन्हे, अपने गृह राज्य मिजोरम में, लौटने नहीं दे रहे हैं।

19 वर्षों से शिविरों में रहने वाले, 25 दिसम्बर को हर साल रोते हैं दुखी होते हैं ईसाईयों को कोसते हैं कि ईसा मसीह के जन्म दिवस की खुशियाँ, क्यों मनाएँ? सोचिए।

इन्द्रदेव गुलाटी बुलन्दशहर
मो. 08958778443

****

आर्य मित्र मण्डल लाहौर द्वारा प्रसारित एक ऐतिहासिक दस्तावेज–उपनियम

1. प्रत्येक वैदिक सत्संगी को सन्ध्या, हवन, स्वाध्याय, व्यायाम, प्राणायाम, वेद आज्ञानुकूल ऋषि दयानन्द द्वारा निर्धारित पद्धति के अनुसार नियमित रूप से करने होंगे।
2. प्रत्येक सत्संगी को प्रतिदिन एक वेद मन्त्र का स्वाध्याय करना चाहिए।
3. प्रत्येक सदस्य को एक वैदिक दैनन्दिनी (डायरी) आवश्यकतानुसार अवश्य ही बनानी होगी, उसमें अपने गुण दोष सभी अङ्कित करते रहना चाहिए।
4. प्रत्येक सत्संगी को चाहिए कि वह प्रधान केन्द्र को अपने सन्ध्या, हवन, स्वाध्याय, व्यायाम, योगाभ्यास के कार्यक्रम की विधि प्रति मास सूचित करता रहे।
5. भारतवर्ष के प्रत्येक वैदिक सत्संग के सदस्य का मुख्य कर्तव्य होगा, कि वह आर्य मित्र मण्डल की ओर से निश्चित अपने अधिवेशनों की तिथियों में घोषित स्थान पर परिवार सहित अथवा विशेष अवस्था में परिवार का एक मुख्य व्यक्ति अवश्य पहुंचे।
6. इस मण्डल के सदस्य पर कोई चन्दा आदि नहीं होगा, हां समय समय पर अपने संस्कार अथवा प्रसन्नता के अवसरों पर जो भी मण्डल को देना वह स्वीकार होगा।
7. प्रत्येक सत्संगी को चाहिए कि वह अपने निकटवर्ती सत्संगियों से भाई चारे जैसा सम्बन्ध रखे, तथा दुःख सुख में एक दूसरे का साथी बनने का पूरा पूरा यत्न करे।
8. यदि किसी सत्संगी का असमय में स्वर्गवास हो जाये और उसके पश्चात् उसके परिवार का भरण पोषण अथवा उसके अनाथ बच्चों की शिक्षा का प्रश्न उपस्थित हो जावे तो उसकी सब व्यवस्था आर्य मित्र मण्डल अथवा उसकी स्वीकृति से निकटवर्ती सत्संगी करेगा, प्रत्येक सत्संगी का प्रधान कर्तव्य है कि वह समय पर मण्डल को सूचित करे।
9. भारत के प्रत्येक उस नगर में वैदिक सत्संग की स्थापना हो सकेगी जहां पर पांच अथवा उससे अधिक घर होंगे।
10. सत्संग के संचालकों की नियुक्ति प्रधान करेगा।
11. संचालक उस क्षेत्र का सर्वाधिकारी होना होगा।
12. मण्डल के दशवें उद्देश्य को सफल बनाने के लिए उचित सहयोग देना होगा।
13. प्रत्येक सदस्य को स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग करना आवश्यक होगा।

–प्रस्तुतिः– भारतेन्दु सूद
चण्डीगढ़

****

www.thearyasamaj.org

नेताजी सुभाष चन्द्र बोस जयंती-समारोह मनाया गया

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल भरकुड़िया, (डेहरी–ऑन–सोन, बिहार) नेताजी सुभाष चन्द्रबोस की 120वीं जयंती हर्षोल्लास पूर्वक मनाई गई। कार्यक्रम का शुभारंभ एवं मंत्रोच्चारण से किया गया। इस अवसर पर विद्यालय के बच्चों द्वारा स्वागत गान प्रस्तुत किया गया।

माननीय मुख्य अतिथि ने बच्चों को संबोधित करते हुए कहा कि, "शिक्षा के साथ–साथ अच्छे संस्कार ग्रहण करना बच्चों का कर्तव्य है। आप सब अच्छी शिक्षा ग्रहण करते हैं, यह सौभाग्य की बात है। आप अच्छे संस्कार भी ग्रहण करें।

इस अवसर पर प्राचार्य बासकी प्रसाद ने कहा कि, "हम– सभी का सौभाग्य है कि, आज मैनेजिंग कमिटी के पदाधिकारी यहाँ मौजूद हैं। इनकी गरिमामयी उपस्थिति एवं संदेश से बच्चों में नई उर्जा संचारित होगी। इस अवसर पर विधालय के वरीय शिक्षक आर.आर. पाण्डेय, सुधीर सिंह, अरविन्द सिंह, अमरेन्द्र तिवारी, धनजंय सिन्हा, मनोज सिन्हा, अमित आर्या, कृष्णकांत, योगेन्द्र सिंह, प्रमोद कुमार सहित विद्यालय के सभी शिक्षक एवं शिक्षकेतर कर्मचारी मौजूद रहे।

धन्यवाद ज्ञापन प्राचार्य बासकी प्रसाद ने किया। प्रार्थना–सभा के पश्चात् पदाधिकारियों का दल एल.एम.सी. मिटींग के लिए रवाना हुआ।

ऐतिहासिक गुरुकुल फरीदाबाद का शताब्दी समारोह

एक विज्ञप्ति के अनुसार ऐतिहासिक गुरुकुल इन्द्र आर्य नगर, सराय ख्वाजा, फरीदाबाद, (हरियाणा) का भव्य शताब्दी समारोह दिनांक 18–19 फरवरी 2017 दिन शनिवार, रविवार को बड़ी धूम–धाम से मनाया जायेगा।

गुरुकुल प्राचार्य आचार्य ऋषिपाल ने बताया कि इस गुरुकुल की स्थापना स्वामी श्रद्धानन्द ने स्वयं अपने हाथों से ही थी। इस गुरुकुल में देश को स्वतन्त्र कराने के लिए अनेक प्रसिद्ध क्रान्तिकारी जैसे– नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, चन्द्रशेखर आज़ाद, रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्ला खां, सरदार भगत सिंह, लाला लाजपतराय आदि आया करते थे। सभी क्रांतिकारी यहाँ गुप्त मन्त्रणा करते थे। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस जी तो इस गुरुकुल में अंग्रेज़ों से छिपकर 8 दिन तक अज्ञातवास में रहे। इस गुरुकुल में अंग्रेजी शासन के छापे पड़े, लेकिन कुछ न पा सके।

इस गुरुकुल में महान हस्तियां भी आ चुकी है और इस शताब्दी समारोह में भी राजनैतिक एवं सामाजिक महान हस्तियां पधारेंगी। आर्य जगत् के प्रसिद्ध संन्यासी, उपदेशक, भजनोपदेशक तथा आचार्यगण इस अवसर पर पहुचेंगे।

बी.बी.के डी.ए.वी कॉलेज विमेन ने निरन्तर तीसरी बार 'जी.एन. डी.यू इंटर-कॉलेज पॉवर लिफि्टंग चैम्पियनशिप' जीती

बी.के. डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर की पॉवर लिफटिंग टीम ने डी.ए.वी. कम्पलेक्स, शास्त्री नगर, अमृतसर में आयोजित हुई **'जी.एन. डी.यू. इंटर–कॉलेज पॉवर लिफि्टंग चैम्पियनशिप' निरन्तर तीसरी बार जीतकर** कॉलेज का नाम रोशन किया। कॉलेज टीम ने एच.एम.वी. कॉलेज, जालन्धर, जी.एन.डी.यू कैम्पस, अमृतसर, बी डी आर्य कॉलेज, जालन्धर कैंट और बेबे नानकी कॉलेज, धारीवाल को हराकर शानदार प्रदर्शन किया।

विजेता टीम की खिलाड़ी ने– सुश्री नवजोत कौर, मनप्रीत कौर, मानालिशा, सोनोवाल, गगनदीप कौर, संदीप कौर, मनप्रीत कौर, सुखमनकौर और मनप्रीत कौर थी। कॉलेज की पाँच खिलाड़िनों – नवजोत कौर, संदीप कौर, मनप्रीत कौर और मानालिशा सोनोवाल और गगनदीप कौर को फरवरी 2017 को पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ में होने जा रही 'ऑल इण्डिया इंटरवर्सिटी चैम्पियनशिप के लिए चयनित कर लिया गया है।

प्राचार्य डॉ. पुष्पिंदर वालिया ने युवा विजेता खिलाडियों को हार्दिक बधाई दी और उन्हें भविष्य में भी शानदार प्रदर्शन करने हेतु प्रेरित व प्रोत्साहित किया। उन्होंने कहा कि महाविद्यालय की खिलाड़िनें निरन्तर विविध चैम्पियनशिपों को जीतकर महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के नारी–सशक्तिकरण को साकार रूप दे रहीं हैं जिसके परिणामस्वरूप बी.बी.के डी.ए.वी. महाविद्यालय खेल–क्षेत्र में सदैव अग्रसर रहता है।

श्रीमती स्वीटी बाला, अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा विभाग सहित अन्य फैकल्टी सदस्यों एवं पॉवर लिफि्टंग कोच श्री दलजिंदर सिंह और बलजीत सिंह ने भी खिलाडियों को उनकी उपलब्धियों पर शुभकामनाएँ दी।

धर्मार्थ अपील

आर्य समाज मन्दिर (गुरूकुल विभाग) फिरोजपुर शहर के जर्जरित भवन के निर्माण कार्य हेतु लगभग रू 45 लाख की राशि व्यय होनी है जिसमें से लगभग 20 लाख राशि व्यय हो चुकी है। आपसे निवेदन है कि आप निर्माण कार्य हेतु अधिक से अधिक राशि "आर्य समाज मन्दिर, फिरोजपुर शहर के नाम खाता नं. 02772191030668 IFSC Code ORBC 100277 पर सहयोगार्थ भिजवाकर पुण्य के भागी बनें।

सम्पर्क सूत्रः– राजीव गुलाटी–09463039276, इन्द्रजीत भाटिया– 09417372538

शोक समाचार

मुम्बई आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री एवं टंकारा ट्रस्ट के ट्रस्टी श्री अरूण अब्रोल जी की माता श्रीमती स्वर्णलता अब्रोल जी का हृदयगति रुक जाने से दिनांक 25–01–2017 को स्वर्गवास हो गया। श्रीमती अब्रोल जी के मन में आर्य समाज के प्रति अगाध श्रद्धा थी और आपने वैदिक मान्यताओं का अनुसरण करते हुए एक आदर्श जीवन जिया। आपके स्वर्गवास से आर्य समाज की अपार क्षति हुई है जिसकी पूर्ति निकट भविष्य में होना सम्भव नहीं है। हम समस्त आर्य जगत् परिवार की ओर से सादर श्रद्धांजलि अर्पित करते है।

www.thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 08/09-02-2017
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

डॉ. सुन्दरलाल कथूरिया को मिला स्वामी प्रज्ञानन्द प्रज्ञाभूषण सम्मान

संस्कारधानी जबलपुर (म. प्र.) की प्रतिष्ठित साहित्यिक संस्था 'कादम्बरी' ने 2016 के साहित्यकार/पत्रकार सम्मान समारोह के अवसर पर मूर्धन्य साहित्यकार डॉ. सुन्दरलाल कथूरिया को अपने सर्वोच्च सम्मान 'स्वामी प्रज्ञानन्द प्रज्ञाभूषण सम्मान' से सम्मानित किया। सम्मान रूप में उन्हें मोतियों की माला, प्रशस्ति पत्र एवं 21 हजार रूपये की मानराशि प्रदान की गई। उन्हें यह सम्मान रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर के कुलपति प्रो. कपिल देव मिश्र एवं प्रख्यात समालोचक आचार्य कृष्णकान्त चतुर्वेदी ने प्रदान किया।

इस अवसर पर डॉ. सुन्दरलाल कथूरिया का संक्षिप्त परिचय देते हुए संस्था के अध्यक्ष डॉ. गार्गी शरण मिश्र 'मराल' ने कहा कि भावनगर विश्वविद्यालय भावनगर (गुजरात) में हिन्दी विभाग के प्रो. अध्यक्ष रहे डॉ. कथूरिया के 45 से अधिक स्तरीय ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। 45 वर्षों तक अध्यापन से जुड़े डॉ. कथूरिया को 85 से अधिक सम्मानों/ पुरस्कारों से अलंकृत किया जा चुका है। वे सुप्रसिद्ध समालोचक, प्रख्यात रस शास्त्री, सहृदय कवि, निर्भीक पत्रकार एवं उच्चकोटि के वैदिक चिन्तक मनीषी हैं।

उच्चकोटि के साहित्यकार डॉ. कथूरिया कुशल प्रशासक भी रहे हैं। इनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर अनेक विश्वविद्यालयों से शोधकार्य हुए हैं तथा षष्टिपूति एवं अमृत महोत्सव के अवसर पर इन्हें भव्य अभिनन्दन ग्रन्थ भेंट किये गये हैं। डॉ. कथूरिया विश्वस्तरीय संदर्भग्रन्थों में विवरणांकित हैं।

डी.ए.वी. आर.के. पुरम् सैक्टर-9 (दिल्ली) में गणतन्त्र दिवस मनाया गया

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल सेक्टर–9 में गणतन्त्र दिवस का पर्व बड़ी धूमधाम से मनाया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि जनरल कालरा, श्री धर्मवीर सिंह (वार्ड पार्षद), श्री लावण्या जी की उपस्थिति से सर्वप्रथम ध्वजारोहण के साथ राष्ट्रगान हुआ फिर शपथ ली गई। बच्चों ने गणतन्त्र दिवस के महत्व को बताया तथा भारत की उपलब्धियों की जानकारी दी। देश भक्ति के गीत गाए गये जिसमें विद्यालय के सभी बच्चे शिक्षक एवं अतिथिगण भी शामिल थे।

श्री कालरा जी ने बच्चों को शुभकामनाएँ दी तथा अपने उद्बोधन में कहा कि वे जब भी विद्यालय आते है बच्चों के जोश व प्रस्तुति को देखकर सदा प्रसन्नता महसूस करते है।

श्री धर्मवीर जी ने भी बधाई देते हुए विद्यालय के रख रखाव की प्रशंसा की और मुख्य अध्यापिका तथा शिक्षकों के प्रयास को सराहा।

अंत में श्रीमती चोपड़ा (मुख्य–अध्यापिका ने बच्चों को लहराता हुआ तिरंगा दिखाते हुए कहा कि इस झंडे के लिए अनेकों लोगों ने बलिदान दिया है माँ, बहनों व बच्चों ने अपने बेटों, भाईयों व पिता को खो दिया। आप सभी बच्चें मन लगा कर काम करें देश के लिए यही योगदान होगा।

'वंदे मातरम्' 'भारत माता की जय' के नारों से कार्यक्रम का समापन हुआ।

झज्जर में माता धापा देवी की पुण्यतिथि में 'बेटी बचाओ' का संकल्प

महर्षि दयानन्द शिक्षण केन्द्र झज्जर (हरियाणा) में स्व. माता धापा देवी की पुण्यतिथि के अवसर पर यज्ञ–भजन–प्रवचन–अभिनन्दन समारोह का आयोजन किया गया। यज्ञ ब्रह्मा कु. सुशीला आर्या, प्राध्यापिका, दिल्ली ने कहा कि यज्ञ हमें आपस में प्रेमभाव से रहने का सन्देश देता है। समाज के सभी व्यक्तियों को आपस में मिल जुल कर के रहना चाहिए तभी हमारा यज्ञ करना सार्थक है। वायुसेना में नियुक्त वारन्ट अधिकारी श्री महावीर सिंह ने अपने मधुर भजनों द्वारा सन्देश दिया कि मानव शरीर नश्वर है और आत्मा अविनाशी है। हमें अपने शरीर से शुभ कर्म करने चाहिएँ ताकि हमारा जीवन

सफल होवे। श्रीमती अरविन्द गार्गी, प्रधाना, महिला आर्य समाज झज्जर ने अपने उद्बोधन में कहा कि स्वामी दयानन्द के बताए मार्ग और वेदों के अनुसार जीवन जीने से ही हमारा कल्याण हो सकता है। हमें सामाजिक बुराईयों को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए तभी सामाजिक वातावरण शुद्ध होगा।

डॉ. मंगतराम, श्री दलीपसिंह, श्री वागीश आर्य आदि महानुभावों ने शुभ कर्मों में सभी के सहयोग की आवश्यकता पर बल दिया। रा. महाविद्यालय के सेवा निवृत प्राचार्य डॉ. आजाद सिंह दूहन, ब्र. ब्रिजेन्द्र, झज्जर, ब्र. कृष्ण आदि ने आर्य समाज के सन्देश को घर–घर पहुँचाने के कार्यक्रमों को बढ़ाने का आह्वान किया।

पं. रमेशचन्द्र वैदिक ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की। उन्होंने कहा कि हमें माँ, बहन, पत्नी तभी मिलेगी जब बेटी बचेगी। हमें हर कीमत पर बेटी को बचाना होगा। इस अवसर पर प्रमुख सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को 'गायत्री मंत्र' के स्मृति चिन्ह देकर सम्मानित किया गया।

आर्य समाज बीकानेर गंगायचा अहीर में स्व. हीरा लाल जी का 111वाँ जन्म दिवस मनाया गया

आर्य समाज बीकानेर गंगायचा अहीर जिला रेवाडी के संस्थापक स्व. महाशय हीरा लाल जी आर्य का 111 वां जन्मदिन बडी धूम–धाम से आर्य समाज के प्रांगण में मनाया गया। कार्यक्रम का शुभारम्भ प्रातः काल 9:00 बजे बृहद यज्ञ के साथ किया गया। रेवाड़ी जिला वेद प्रचार मण्डल के अध्यक्ष स्वामी जीवानन्द जी "वैदिक" के ब्रह्मत्व में आस–पास के गाँवों व आर्य समाजों से आये सैंकड़ों आर्य भद्रपुरुषों ने यज्ञ सम्पन्न कराया। तत्पश्चात ईशरोदा (अलवर) से पधारे विद्वान भजनोपदेशक म. धर्मपाल आर्य की संगीतमय प्रस्तुति से श्रोता मंत्र–मुग्ध हो गए।

म. जसवन्तसिंह आर्य व श्री रामकिशन शास्त्री ने अपने उद्बोधन में महाशय जी के जीवन व कार्यो पर प्रकाश डाला। श्री सौम्यमुनि व स्वामी ब्रह्मानन्द जी "एकान्ती" की उपस्थिति इस समारोह को चार चांद लगा गई। महाशय हीरालाल जी के शिष्य मास्टर दीनदयाल आर्य ने अपने अध्यक्षीय भाषण में अपने गुरुजी को भावभीनी श्रद्धांजलि दी। मंच का संचालन श्री जयप्रकाश आर्य ने किया। भोजन के बाद समारोह सम्पन्न हुआ।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**